ओ३म्

सुधारक

गुरुकुल झज्जर का लोकप्रिय मासिक पत्र

वर्ष ६१ अंक ११ जुलाई २०१४ आषाढ़ २०७१ वार्षिक मूल्य १०० रु०

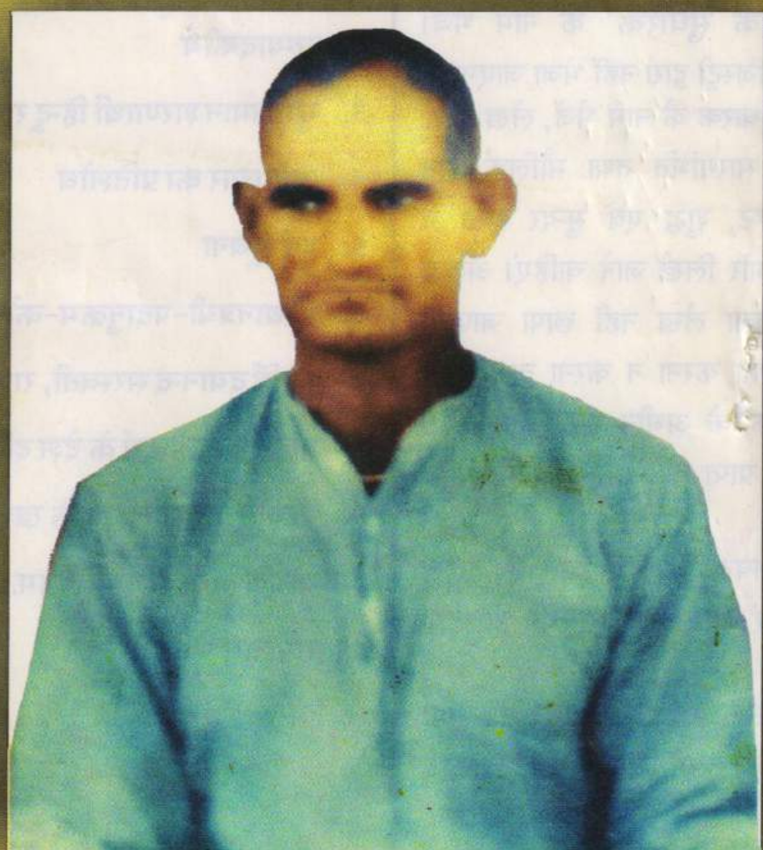

बिहार-उड़ीसा में ईसाईपादरियों के बढ़ते हुए धर्मान्तरण को रोकने में 7 जुलाई 1966 को अपने प्राणों की आहुति प्रदान करनेवाले

ब्रह्मचारी हरिशरण जी बाइबिलाचार्य

संस्थापक : स्व० स्वामी ओ३मानन्द सरस्वती
प्रधान सम्पादक : आचार्य विजयपाल
सम्पादक : विरजानन्द दैवकरणि
व्यवस्थापक : ब्र० राहुल आर्य

सुधारक के नियम व सविनय निवेदन

1. सुधारक का वार्षिक शुल्क 100 रुपये है तथा आजीवन सदस्यता शुल्क 1000 रुपये है।
2. यदि सुधारक 20 तारीख तक नहीं पहुंचता है तो आप व्यवस्थापक सुधारक के नाम से पत्र डालें। पत्र मिलते ही सुधारक पुन: भेज दिया जाएगा।
3. वार्षिक शुल्क तथा आजीवन शुल्क मनीआर्डर द्वारा **'व्यवस्थापक सुधारक'** के नाम भेजें। सुधारक वी.पी. रजिस्ट्री द्वारा नहीं भेजा जाएगा।
4. लेख सम्पादक सुधारक के नाम भेजें, लेख छोटे, सरल, संक्षिप्त, सारगर्भित तथा मौलिक होने चाहिएं तथा स्पष्ट, शुद्ध एवं सुन्दर लेख में कागज के एक ओर लिखे जाने चाहिएं। अशुद्ध एवं गन्दे लेखवाला लेख नहीं छापा जाएगा। लेखों को प्रकाशित करना न करना तथा उनमें संशोधन सम्पादक के अधीन होगा। अस्वीकृत लेख डाक-व्यय प्राप्त होने पर ही वापिस भेजे जाएंगे।
5. सुधारक में विज्ञापन भी दिए जाते हैं, परन्तु विज्ञापन शुद्ध एवं वास्तविक वस्तु का ही दिया जाएगा।
6. यह सुधारक मासिक पत्र समाजसुधार की दृष्टि से निकाला जाता है। इसमें आपको धर्म, यज्ञकर्म, समाजसुधार, देश व समाज की स्थिति, ब्रह्मचर्य, योगासन आदि विषयों पर लेख पढ़ने को मिलेंगे।
7. सुधारक के दस ग्राहक बनानेवाले सज्जन को एक वर्ष तक नि:शुल्क सुधारक भेजा जाएगा तथा पचास ग्राहक बनानेवाले सज्जन को दो वर्ष नि:शुल्क सुधारक भेजा जाएगा तथा उसका फोटो सहित जीवन परिचय सुधारक में निकाला जाएगा।

—व्यवस्थापक

वर्ष :61 अंक : 11
जुलाई 2014 विक्रमाब्द 2071
दयानन्दाब्द 190 कलिसंवत् 5115
सृष्टिसंवत्-1,96,08,53,115

विषय-सूची

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ
1.	वेदोपदेश	1
2.	सम्पादकीय	2
3.	मुसलमान शरणार्थी हिन्दू राज्य में	4
4.	अत्याचार का प्रतिशोध	6
5.	हर्ष सूचना	10
6.	प्रस्थानत्रयी-पदानुक्रम-कोष : एक समीक्षा	11
7.	महर्षि दयानन्द सरस्वती, राष्ट्र और राष्ट्रधर्म	13
8.	प्राकृतिक सौन्दर्य के देश दक्षिण अफ्रीका..	14
9.	प्राचीन पाठशालाओं के खर्च की......	16
10.	गोवंश हत्या के दुष्परिणाम.....	19
11.	समाचार प्रभाग	23

सुधारक मासिक पत्र का वार्षिक शुल्क १०० रुपये भेजकर स्वयं ग्राहक बनें और दूसरे साथियों को भी ग्राहक बनाकर सुधार कार्य में सहयोग दीजिये।

-व्यवस्थापक सुधारक

वेदोपदेश

१६- चैत्र

**नयसीद्वति द्विषः कृणोष्युक्थशंसिनः।
नृभिः सुवीर उच्यते।।**

ऋग्वेद० ६.४५.६।।

विनय

"सुवीर"— सर्वश्रेष्ठ वीर— किसे कहना चाहिये? अंत में तो प्रत्येक ही गुण की पराकाष्ठा भगवान् में है, परिपूर्ण वीरता का निवास भी उन्हीं में है। उनकी वीरता का अनुकरण करनेवाले मनुष्य, नर लोग, सच्चे पुरुष उन भगवान् को ही 'सुवीर' नाम से पुकारते हैं। पर उनकी वीरता कैसी है?

अज्ञानी लोग समझते हैं कि अपने शत्रु, द्वेषी को नुकसान पहुँचाने में सफल होजाना ही बहादुरी है। यह निरा अज्ञान है। क्रोध के वश में आजाना तो हार जाना है। क्रोधवश होकर मनुष्य केवल अपने को विषयुक्त करता है और जलाता है एवं क्रोधी अपने शत्रु का नाश क्या करेगा? वह तो अपना नाश पहिले कर लेता है। ज्यों-ज्यों हम अपने द्वेषी के लिये अनिष्ट-चिन्तन करते हैं, त्यों-त्यों उसमें हमारे प्रति द्वेष और बढ़ता जाता है, उसका द्वेष, उसका शत्रुपना बढ़ता जाता है। उसे हानि पहुँचा लेने पर, उसके शरीर को चोट दे लेने पर, यहां तक कि उसे मार डालने पर भी उसकी शत्रुता नष्ट नहीं होती, वह तो और बढ़ती जाती है। शत्रु के शरीर का, धन का, मान का एवं उसकी अन्य सब चीजों का हम बेशक नाश करने में सफल होजायें पर उतना ही उतना वह शत्रु (असली शत्रु) बढ़ता जाता है, उसका शत्रुपना बढ़ता जाता है। यह क्या हुवा? अत: वीरता (परमात्मदेव से अनुकरणीय सच्ची वीरता) इसमें है कि हम उसकी बाहरी किसी चीज़ का नाश न करें (और क्रोध से हम अपना भी नाश न करें) किसी तरह उसका— किन्तु उसकी शत्रुता का नाश कर दे। उसके अन्दर हम ऐसे घुसें कि वह हमारा शत्रु न रहे, वह मित्र होजाय। बहादुरी इसमें है कि हम क्रोध को जीतकर, धैर्य रखकर अपने द्वेषी के द्वेषभाव को बिल्कुल निकाल डालें, ऐसा निकाल डालें कि वह हमारी निन्दा करना तो दूर रहे वह हमारी प्रशंसा के गीत गाने लगे। यह है शत्रु पर विजय पाना। पर ऐसी विजय पाने के लिये अपने में बड़ा भारी बल चाहिये— अपने में बलिदान की न खतम होनेवाली शक्ति चाहिये— बड़ा धैर्य चाहिये, बड़ी भारी वीरता चाहिये। हम भी परिमित अर्थ में बोला करते हैं कि वीर वह है जिसकी शत्रु भी प्रशंसा करें, पर हमें तो अपरिमित अर्थ में उस भगवान् की सुवीरता का आदर्श अपने सामने रखना चाहिये जिनके विषय में भक्त लोग समझते हैं कि आज संसार में जो लोग बिल्कुल उल्टे जा रहे हैं वे भी एक दिन लौटकर भगवद्भक्त-भगवन् के प्रशंसक - बनेंगे और मुक्त होंगे। भगवन् की उस अपरिमित वीरता में से, हृदय-परिवर्तन करने की उनकी इस अनन्त शक्ति में से और उनके अनन्त धैर्य में से हम भी कुछ ले लेवें, हम भी वीर बनें।

शब्दार्थ—

हे इन्द्र तू (**द्विषः**) द्वेष करनेवाले के द्वेषभाव को (**इत् उ**) निश्चय से (**अति नयसि**) निकाल डालता है (**तान्**) तू उन्हें (**उक्थशंसिनः**) अपना प्रशंसक (**कृणोषि**) बना देता है (**नृभिः**) सच्चे मनुष्यों से तू (**सुवीर उच्यते**) सुवीर कहाता है।

(—वैदिक विनय से)

सम्पादकीय....

गुरुपूर्णिमा पर शिष्यों का कर्त्तव्य

❑ विरजानन्द दैवकरणि

१२ जुलाई २०१४ को गुरुपूर्णिमा का पर्व मनाया जा रहा है। इस पर्व को सनातनी पौराणिक लोग अतिश्रद्धा भक्तिपूर्वक मनाते हैं। इस दिन वे अपने गुरु की पूजा अर्चना करते हैं। यथाशक्ति दान-दक्षिणा भी देते हैं। उस समय गुरु कुछ उपदेश दे या न दे, शिष्य लोग उपदेश ग्रहण की इच्छा करें या न करें यह उनकी अपनी इच्छा और परिस्थिति पर निर्भर करता है। कितने ही लोग तो भगवान् से भी ऊपर गुरु को मान लेते हैं। गुरु ने जो कह दिया वह ब्रह्मवाक्य है। गुरुमाहात्म्य के श्लोक बना रखे हैं, गुरुगीता भी प्रकाशित की हुई है। दोहा भी इस प्रकार बना लिया है-

गुरु गोविन्द दोनों खड़े किसके लागूं पाय।
बलिहारी गुरुदेव की, जिन गोविन्द दियो बताय।।

इस गुरुपने की आड़ में गुरुडम भी बहुत चल पड़ा है। भारत में तो विविध प्रकार के गुरुओं की बाढ़-सी आई हुई है। गुरु शिष्य के कान में अपना बनाया "मन्त्र" पढ देता है और कहता है कि इसे किसी को बताना नहीं, अन्यथा यह मंत्र शक्तिरहित होजायेगा। यहां तक नियम करवा देते हैं कि पति-पत्नी भी परस्पर ऐसे तथाकथित 'मंत्र' को एक-दूसरे को नहीं बताते। इसी प्रकार अंधपरम्परा चल पड़ती है। यदि गुरु का बताया मंत्र कल्याणकारी है तो वह सबको क्यों नहीं बताया जाये। क्या जिसे बताया गया है उसी का कल्याण करना है। सबके कान में अलग-अलग मंत्र देने की अपेक्षा सार्वजनिक रूप से सब श्रोताओं को एक ही बार में मंत्रोपदेश दे दिया जाये तो क्या हानि है? परन्तु अपना महत्त्व बढ़ाने के लिए और प्रभूतमात्रा में दक्षिणा पाने की लालसा से सामान्य भोले लोगों को मूर्ख बनाने के लिए ढोंग रचाया हुआ है। बिना पढ़े लोग इन ढोंगियों के जाल में फंस जाते हैं, यह तो विशेष चिन्तनीय नहीं है, परन्तु वकील, डॉक्टर, इंजीनियर, प्रोफेसर, विधायक, सांसद, मंत्री आदि भी ऐसे तथाकथित गुरुओं के जाल में फंसे रहते हैं यह बहुत दुर्भाग्य की बात है। इसलिए ऐसे गुरुडमरूपी जाल में न फंसकर वैदिक शिक्षानुसार श्रेष्ठ रीति से गुरुपूजा करनी चाहिये। उसका कुछ संकेत यहां किया जा रहा है।

सबसे पहला गुरु तो ईश्वर है। महर्षि पतंजलि जी योगदर्शन में कहते हैं- स पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्।

वह ईश्वर इस सृष्टि के आदि में जितने व्यक्ति उत्पन्न हुए हैं उनका और उनसे पूर्व सृष्टियों में उत्पन्न सभी लोगों का गुरु है, क्योंकि वह कालातीत है, काल से उसका अन्त नहीं होता। इसलिए ऐसे गुरु ईश्वर ने वेद के द्वारा जो उपदेश प्रदान किया है। तदनुसार आचरण करके अपने जीवन को उच्च बनाना चाहिये। यही वास्तविक गुरुपूजा है।

दूसरा लौकिक गुरु होता है। गुरुः कस्मात् गृणाति शब्दानुपदिशति स गुरुः। सामान्य अर्थ इसका यह है कि हमें पढाये वह गुरु है। महर्षि दयानन्द जी के अनुसार गुरु का अर्थ है-

जो वीर्यदान से लेके भोजनादि कराके पालन करता है, इससे पिता को गुरु कहते हैं। और जो अपने सत्योपदेश से हृदय के अज्ञानरूपी अंधकार को मिटा देवे, उसको भी गुरु अर्थात् आचार्य कहते हैं। **-आर्योद्देश्यरत्नमाला, संख्या ६२**

आचार्य- जो श्रेष्ठ आचार को ग्रहण कराके, सब विद्याओं को पढा देवे उसको आचार्य कहते है।
-आयोद्देश्यरत्नमाला, संख्या ६१

गुरु- माता, पिता और जो सत्य का ग्रहण करावे और असत्य को छुड़ावे वह भी गुरु कहाता है।

-स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश, संख्या ३३

आचार्य- जो विद्या का देने वाला है, उसकी

तन-मन से से वा करनी।

-सत्यार्थप्रकाश ११वां समुल्लास

महर्षि यास्काचार्य ने निरुक्तशास्त्र में आचार्य की निरुक्ति इस प्रकार की है। आचिनोति बुद्धिमिति वा। (अध्याय १, पाद २, खण्ड १)

जो अपने शिष्यों को सदाचार की शिक्षा दे, जो अपने शिष्यों को शास्त्र के गूढ़ अर्थों को जता देवे, अथवा जो ऐसी शिक्षा दे जिससे धन-सम्पत्ति का संग्रह भी होसके, जो अपने शिष्यों की बुद्धि को इस प्रकार से विकसित बनादे कि वह सभी विषयों में पारंगत होजाये, उसे आचार्य कहते हैं।

परन्तु वर्तमान की प्रचलित शिक्षापद्धति में विद्यार्थियों को केवल किताबी शब्दज्ञान कराया जाता है तथा सामान्यतया दूसरे उद्देश्य की पूर्ति की जाती है। आचार की शिक्षा का स्थान नगण्य ही है।

प्राचीनकाल में गुरु अपने शिष्य को उपदेश देता था, उसका निर्देश तैत्तिरीयोपनिषद् में किया हुआ है। यथा -

वेदमनूच्याचार्योऽन्तेवासिनमनुशास्ति। सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायान्मा प्रमद। इत्यादि।

आचार्य अन्तेवासी अर्थात् अपने शिष्य और शिष्याओं को इस प्रकार उपदेश करे कि तू सदा सत्य बोल, धर्माचार कर, प्रमादरहित होके पढ-पढा, पूर्ण ब्रह्मचर्य से समस्त विद्याओं के ग्रहण और आचार्य के लिए प्रिय धन देकर विवाह करके सन्तानोत्पत्ति कर। प्रमाद से सत्य को कभी मत छोड़, प्रमाद से धर्म का त्याग मतकर, प्रमाद से आरोग्य और चतुराई को मत छोड़..........देव विद्वान् और माता-पितादि की सेवा में प्रमाद मत कर। जैसे विद्वान् का सत्कार करे, उसी प्रकार माता, पिता, आचार्य और अतिथि की सेवा सदा किया कर..........जो हमारे सुचरित्र अर्थात् धर्मयुक्त कर्म हों उनका ग्रहण कर और जो हमारे पापाचरण उनको कभी मत कर........श्रद्धा से देना, अश्रद्धा से देना, शोभा से देना, लज्जा से देना, भय से देना और प्रतिज्ञा से भी देना चाहिये। जब कभी तुझको कर्म वा शील तथा उपासना ज्ञान में किसी प्रकार का संशय उत्पन्न हो तो जो समदर्शी पक्षपातरहित, योगी, अयोगी, आर्द्रचित्त, धर्म की कामना करनेवाले धर्मात्मा जन हों, जैसे वे धर्म मार्ग में वर्तें, वैसे तू उसमें वर्त्ता कर। यही आदेश आज्ञा, यही उपदेश, यही वेद की उपनिषद् और यही शिक्षा है। इसी प्रकार वर्तना और अपनी चाल-चलन सुधारना चाहिए।

-सत्यार्थप्रकाश तृतीय समुल्लास

इस गुरु के उपदेशानुसार आचरण करना ही सच्ची गुरु पूजा है। यहां गुरु ने यह नहीं कहा कि कहीं शंका हो तो मुझसे ही पूछना और किसी से नहीं। अपितु जो भी धर्मात्मा, परोपकारी जन हो उससे भी संशय की निवृत्ति करवा सकता है। आजकल के गुरु की यह कामना रहती है कि जो चेला मूंड लिया वह किसी और के पास न जाये, सदा मेरे ही पास रहे, मेरी ही सेवा करे, मुझे ही धन दे। चेले को तुलसी चरणामृत दें, कण्ठी बांधें, चेला मूंडने से जन्मभर का पशु हो जाता है चाहे वैसे बोझा लादो। इसलिए ऐसे गुरु नामधारियों से सावधान रहना चाहिये। आजकल धनिक और अंधविश्वासी लोग मन्दिरों में और गुरुओं को लाखों रुपये का सोना चांदी चढाकर पुण्य प्राप्त करना चाहते हैं, इससे उनको तो कुछ मिलता नहीं, परन्तु गुरु का तो कल्याण हो ही जाता है।

पौराणिकों के अनुकरण पर आर्यसमाज में भी यह गुरुपूजा आरम्भ होगई। उन्हीं की रीति पर चलना, पूजा करवाना, धन बटोरना आदि बहुत उचित नहीं है।

इसलिए वेदादि विद्या का पढना और सत्संग करना आदि उचित कार्य करे। मनुष्य का नेत्र विद्या ही है। बिना विद्या-शिक्षा के ज्ञान नहीं होता। जिनको कुसंग है वे महामूर्ख होकर बड़े दु:ख पाते हैं।

इसलिए इस गुरुपर्व पर वेद और सच्चे गुरु के उपदेशानुसार आचरण करना चाहिए, यही सच्ची गुरुपूजा है।

मुसलमान शरणार्थी हिन्दू राज्य में

— ले० पं० बिहारीलाल शास्त्रार्थमहारथी बरेली

"जब अली के वंश" के उत्साही सैय्यदों ने राज्य स्थापित करने का विचार किया तब सिंध में भी उसका प्रबंध होने लगा। पर पासा उलट गया। सैय्यदों को सफलता न मिली। उस समय उन्हें एक ऐसी जगह की जरूरत हुई जहां वे शरण ले सकते। तब वे एक हिन्दू राजा के राज्य में आकर रहे। राजा ने उनका बहुत स्वागत किया और वे लोग बहुत सुख से रहने लगे।

(कामिल इव्ने असीर) वाकयात सन् १४७ हिजरी पुस्तक से, न्यायशील हिन्दू राजजा, मुहम्मद औफी लिखता है-

"खम्भायत (गुजरात) के राजा के राज्य में एक बार हिन्दू लोगों को अरबों के विरुद्ध पारसियों ने भड़का दिया। इस पर झगड़ा हुआ मुसलमान मारे गये। मस्जिद का मीनार तोड़ दिया गया। इस पर मस्जिद के इमाम जिसका नाम "वली" था, राजधानी नहर वाला में पहुंचा और राजा को सब फरियाद गुजराती भाषा में लिखकर दी। इस पर राजा स्वयं वहीं अकेला पहुंचा और गुप्त रूप से जांच करके मुसलमानों की क्षतिपूर्ति की।"

राजा ने हिन्दुओं से कहा- "जो लोग मेरी छाया और मेरे राज्य में बसते हैं, उन पर कभी ऐसा अत्याचार नहीं होना चाहिए।"

राजा ने अपराधियों को दंड दिया और मीनार पुनः बनवाकर इमाम को इनाम दिया।

कहिये विधर्मियों विदेशियों के साथ भी ऐसे निर्मल न्याय का उदाहरण क्या कहीं मिल सकता है?

"इस राज्य (बलहरा-बल्लभराज) के राज्य में मुसलमानों की मस्जिदें और जामा मस्जिदें बनी हैं। जो हर तरह से आबाद हैं।" (मसऊदी)

मगर क्या अरबी खलिफाओं के शासन में हिन्दुओं को यह धार्मिक स्वतंत्रता थी? यह है हिन्दू राज्य में अन्य मतों की धार्मिक स्वतंत्रता।

इब्रे सईद मगरबी कहता है-

गुजरात के लार नगर के रहनेवाले सभी हिन्दू हैं, जो मूर्ति-पूजा करते हैं। मगर अपने साथ बसा लेते हैं। तोहफेतुलमुजाहिदीन में लिखा है-

"यद्यपि पेसादार और उनके सिपाही मूर्ति पूजक हैं, पर वे मुसलमानों के धर्म और उनके आचार विचार आदि का बहुत कुछ आदर करते और ध्यान रखते हैं। मूर्तिपूजकों और मुसलमानों के इस मेलजोल से इस कारण और भी आश्चर्य होता है कि मुसलमानों की संख्या सारी आबादी का दसवां भाग भी नहीं है, सामूहिक रूप से मालाबार के हिन्दू राजाओं का मुसलमानों के साथ बहुत प्रतिष्ठा और दया का व्यवहार होता है।"

यहां विचार करना चाहिए कि अल्पसंख्यक मुसलमानों के साथ हिन्दू प्रजा, राजा तथा सैनिक कैसा भद्र व्यवहार कर रहे हैं। हिन्दू लोग धार्मिक मतभेद के कारण किसी पर अत्याचार नहीं कर सकते और न किसी से घृणा करते हैं, पर षड्यंत्रकारियों और देशद्रोहियों को तो सहन नहीं कर सकते।

वर्तमान झगड़े भी धार्मिक कारण से नहीं हैं, केवल राजनैतिक कारण ही इन झगड़ों की जड़ है।

शिवाजी के राज्य का वर्णन करते हुए खाफी खां मुसलमान लिखता है-

"उसने (शिवाजी ने) न तो कभी मस्जिद को तोड़ा, न कभी किसी मुसलमान स्त्री के साथ

अनुचित व्यवहार किया। यदि कभी उसके हाथ में कुरान की कोई पुस्तक पड़ जाती, तो वह उसका आदर करता था। और उसे मुसलमानों को लौटा देता था।''

कल्याणगढ़ के किलेदार की पुत्रवधू को नीलो जी पंत कैद कर लाया और दरबार में उपस्थित किया। स्त्री अति रूपवती थी। शिवाजी ने उसे देखकर कहा कि ''माता जीजाबाई इतनी सुन्दर होती तो मैं भी इतना स्वरूपवान् होता।'' महाराज ने उस स्त्री को सम्मान सहित उसके परिवार में भेज दिया।

यह है, हिन्दू राजा के निर्मल चरित्र का ज्वलन्त प्रमाण। (यदुनाथ सरकार का शिवाजी) हिन्दू राजा और प्रजा में इन शुभ गुणों का आधान किसने किया, तपस्वी, साधु और ब्राह्मणों ने। रामायण और महाभारत की कथाओं और धर्म के नाम से नाक भौं सिकुड़नेवाले नेता जरा ध्यान तो दें। बाइबिल और कुरान के धर्म से हिन्दू धर्म की तुलना करके निर्णय करना चाहिए। चूना और दही श्वेत होने के कारण भोजन के समय एक सी नहीं होती।

यदि भारत में राज्य का आदर्श आर्य धर्म नहीं बनेगा। तो भारतीय प्रजा यूरुप के समान आसुरी भावों से पूरित होजायेगी। इसका परिणाम होगा स्वार्थ, विलासिता, अत्याचार, पीड़ित और निर्बलों का शोषण। नित्य के संग्राम और आर्थिक लूट खसोट।

प्रजातंत्र और जनतंत्र साम्यवाद और वर्गवाद में पश्चिमी औषधियें काम न दे सकेंगी। केवल एक पुष्टिकारक स्वास्थ्यवर्धक औषध है जो भारतीय समाज का कल्याण कर सकता है। धर्म, आर्य धर्म, आचारात्मय धर्म। इसीलिए महात्मा गांधी धर्मशून्य राजनीति के समर्थक न थे। उनकी सम्मति में जो लोग राजनीति को धर्म से अलग रखना चाहते हैं, वे धर्म का अर्थ नहीं समझते।

-दयानन्द सन्देश स्वराज्य अंक १९४८ से साभार

ऋषि दयानन्द जी ने कहा है —

१. आर्यावर्त देश की उन्नति तभी होगी, जब विद्या का यथावत् प्रचार होगा और जब तक वेदोक्त आचार में प्रवृत्त न होंगे, तब तक सुख के दिन कभी न आवेंगे।

— प्रथम संस्करण सत्यार्थप्रकाश तृतीय समुल्लास

२. वैरागी आदि सम्प्रदायी और पण्डित लोग छल और कपट रखते हैं, यथावत् पढ़ाते भी नहीं। यहां तक छल और विघ्न करते हैं कि चेला और पुत्र वा बन्धुपुत्र भी विद्यावान् न होजाय, क्योंकि उनकी प्रतिष्ठा होने से मेरी प्रतिष्ठा नष्ट हो जायेगी। इससे जो कुछ गुण जानते भी हैं उनको छिपा के रखते हैं। इसलिए विद्यालोप आर्यावर्त देश में होगया है। सब लोगों को विद्या का प्रकाश करना उचित है। किसी को भी विद्यागुप्त रखना योग्य नहीं।

—तृतीय समुल्लास

३. जब सोलह वर्ष का पुरुष होय तबसे लेके जब तक वृद्धावस्था न आवे, तब तक व्यायाम करे, बहुत न करे, किन्तु ४० बैठक करे और ३० और ४० दण्ड करें, कुछ भींत, खम्भे वा पुरुष से बल करे, फिल लोट करे। उसको भोजन से एक घण्टा पहले करे। सब अभ्यास जब कर चुके उसके एक घण्टा पीछे भोजन करे, परन्तु दूध जो पीना होय तो अभ्यास के पीछे शीघ्र ही पीवे। उससे शरीर में रोग न होगा, जो कुछ खाया वा पीया, सो सब परिपक्व हो जायेगा। सब धातुओं की वृद्धि होती है तथा वीर्य की भी अत्यन्त वृद्धि होती है, शरीर दृढ़ हो जाता है और हड्डियाँ बड़ी पुष्ट होजाती हैं। जठराग्नि शुद्ध प्रदीप्त रहता है और सन्धि से सन्धि हाड़ों की मिली रहती है अर्थात् सब अंग सुन्दर रहते हैं। परन्तु अधिक न करना, अधिक के करने से उतने गुण न होंगे। क्योंकि सब धातु शुष्क और रूक्ष हो जाते है, उससे बुद्धि भी वैसी ही रूक्ष हो जाती है और क्रोधारिक भी बढ़ते हैं, इससे अधिक न करना चाहिए। यह बात सुश्रुत में लिखी है, जो देखना चाहे सो देख लेवे। **शेष पृष्ठ २४ पर**

अत्याचार का प्रतिशोध

❑ विद्याभास्कर श्री पं० रामावतार शर्मा शास्त्री

जनता ही न्याय पाने के बदले में शासकों को शासन करने का अधिकार देनेवाली प्रभु सत्ता है। परन्तु उसे उसका यह न्याय रूपी उचित विनिमय (पलटा) तब ही मिला करता है जब वह अपने अधिकार की रक्षा के लिए तत्पर रहती है। इसलिए जनता का यह महान् कर्त्तव्य होता है कि वह अन्याय करनेवाले शासक व्यक्तियों को दण्डित और लांछित कराकर दूसरे शासकों को अन्याय तथा अत्याचार न करने के लिये भयावह दृष्टांत उपस्थित करके उनको सत्यानुकूल शासन करने के लिए विवश किये रखे। परन्तु स्मरण रहे यह काम संगठन से ही होगा। संगठन से भी वह काम तब होगा जब उसमें निर्दोषता होगी। प्रजा को न्याय दिलाने से दूसरे किसी स्वार्थ या उद्देश्य को आगे न रखना ही संगठन की निर्दोषता मानी जायेगी।

न्याय लेने का ही प्रयत्न है कि जो सफलता देने का पूरा विश्वास दिला सकता है। इसमें सफलता निश्चित है। इस प्रयत्न में सफलता मिलने का परिणाम यह होगा कि जनता में जागृति आजायगी। किसी सोये हुये राष्ट्र को जगाने का यही सरल निर्विघ्न और सुनिश्चित मार्ग है। राष्ट्रों को इसी प्रयत्न से जगाना चाहिए अपना उद्देश्य बिगाड़ लेने वाले साधनों से काम लेना बुद्धिमत्ता नहीं है। इसी प्रयत्न को राष्ट्र जगाने का आधार बनाना चाहिये। इसको सफलता मिलते ही देश का मानसिक गिराव हट जायेगा और उसके स्थान पर मानसिक चेतना आजायेगी। उससे देश में ऐसा असत्य का बैरी, साहसी तथा तेजस्वी वातावरण उत्पन्न होजायेगा, कि वह अत्याचार, अन्याय और उत्पीड़न का इतना उत्तम शान्त विरोध करेगा कि दमन नहीं किया जा सकेगा। क्योंकि इस प्रयत्न की सारी प्रणाली वर्तमान राज्यव्यवस्था के स्वीकृत उपायों पर ही निर्भर होगी। यह प्रणाली वर्तमान राज्यव्यवस्था को भी अन्याय हटवाने के काम में लायेगी। इस पद्धति में वर्तमान शासन-विधान के हाथों से ही अत्याचारी शासकों पर दण्ड प्रयोग किया जायेगा। इस प्रकार का वातावरण ही सत्य का शासन एवं सच्ची स्वतंत्रता या स्वराज्य होगा।

यद्यपि शासन विभाग के काले कारनामे ऐसे गुप्त रहस्य हैं कि जिन्हें सारा संसार जानता है, परन्तु प्रजा का कोई अन्याय विरोधी संगठन न होने से इतना विशाल देश राजकर्मचारियों के पापों के सामने किंकर्त्तव्यमूढ होकर सिर झुकाकर बैठा है और अपराधी राजकर्मचारियों को देश के सुसभ्य तथा विचारशील जनमत रूपी न्यायालय के सामने उपस्थित करके दंडित नहीं कर रहा है। अपराधी राजकर्मचारियों को दण्ड न दे सकना यह देशवासी मनुष्यों की बुद्धि का महा अपमान और देश की संस्कृति सभ्यता तथा मनोदशा पर घोर अत्याचार है; कि देश के शासक आँख मींचकर शासन करें और देश के दण्ड विधान की धाराओं को तोड़कर भी उन्हीं पदों पर बैठे-बैठे प्रजा को त्रास पहुंचाते रहें और प्रजा टुम टुम बैठी देखा करे। अन्याय का विरोध करने वाला योग्य संगठन न होने से ही देश की यह दुखदायी अवस्था हो रही है।

संगठनों का कोलाहल तो सर्वत्र सुनाई पड़ता है परन्तु संगठनों के मूल सिद्धान्त (मन्त्र) का परिचय कहीं भी नहीं पाया जाता। संगठनी लोग कोई न कोई स्वार्थ लेकर संगठन करते हैं। इसी कारण उनके संगठन अपूर्ण और असफल हो जाते हैं। प्राय: संगठन या तो साम्प्रदायिक आधारों पर

होते हैं या भौतिक स्वार्थों के आधारों पर, सम्प्रदाय के आधार पर संगठन करने में तो यह दोष है कि उसमें वे सब लोग सम्मिलित हो सकते हैं जो उस सम्प्रदाय से सम्बन्ध रखते हैं। उस सम्प्रदाय से सम्बन्ध रखनेवाला अन्यायी हो तो भी उसे उस संगठन में से नहीं हटाया जा सकता। जिस संगठन में से अन्यायी दूर न रखे जा सकें वह क्या संगठन है संगठन की निर्दोषता तो यह है कि उससे अन्यायी दूर रखे जा सकें।

संगठन के सुनहरे सिद्धान्त की ओर आजतक संसार ने ध्यान नहीं दिया कि समाज में से किसी अन्याय को पकड़लो और इकली दुकली शक्ति से नहीं किन्तु समाज की सामूहिक शक्ति से उसका विरोध करने लगो। बस केवल इसी बात से समाज का संगठन अपने आप हो जायेगा। अन्यायों का विरोध करने के लिए ही संगठन की आवश्यकता पड़ती है। बताइये अन्याय का विरोध करने के लिए नहीं तो और किस काम के लिये संगठन की आवश्यकता होती है ? यह बड़े आश्चर्य की बात है कि संगठन करने वालों ने संगठन के इस मर्म को आज तक नहीं पहचाना। यदि वे इस मर्म को पकड़कर किसी अन्याय के ऊपर प्रजा का संगठन करते तो बात की बात में संगठन हो जाता। अन्यायों के विरोध में अपराजित और अनन्त बल भरा हुआ है। अन्यायों के विरोधों में साधारण शक्ति नहीं होती। ये मानसिक जड़ता की रामबाण औषध है। ये सारे समाज के ध्यान को अपनी ओर खींच लेते हैं। ये ही समाज संगठन के स्वाभाविक उपाय और उसे स्वतंत्र बनाने की स्वाभाविक रीति हैं। संसार भर का इतिहास खोज लीजिये। सर्वत्र अन्यायों के विरोधों से ही समाजों के संगठन हुए हैं और उन्हें स्वतन्त्रतायें मिली हैं। यदि समाज संगठन करने वाले लोग अन्यायों के विरोध करने को ही अपना मुख्य उद्देश्य और मुख्य कार्यक्रम नहीं बना लेंगे तो वे समाज को संगठित नहीं कर सकेंगे। तब वे संगठनों के नाम से जो कुछ करेंगे उससे अन्यायों का ही समर्थन होता रहेगा।

अन्यायों का विरोध स्वाभाविक सुअवसर है और पीड़ित का पाया हुआ ईश्वरीय शस्त्र है ! यह ऐसा शस्त्र है कि इसमें अन्यायी पक्ष को निश्चित रूप से नीचा देखना पड़ता है और अन्याय पीड़ित के न्याय पाने के अधिकार को सर्वोपरि स्वीकार करके उससे दबना पड़ता है। अन्यायों का विरोध स्वयं ही स्वराज्य है। यह ऐसा स्वराज्य है कि इसकी योग्यता किसी दाता की स्वीकृति का मुंह नहीं ताकती। अन्याय का विरोध प्रारम्भ होते ही समाज में मनोबल आ जाता है और अत्याचार लुप्त हो जाता है। अत्याचार अपना कड़वा विरोध देखे बिना और अत्याचारित के हाथों से अपना अपमान करवाये बिना पीछे नहीं हटता।

जहां कहीं अत्याचार या अन्याय होता है वहीं संगठन का सुअवसर तो भी रहता है। अत्याचार से पीड़ित होनेवाला अकेला ही मनुष्य सारे समाज के सामने संगठित होने का और संगठित होकर अत्याचार के विरोध करने का अवसर लाकर खड़ा कर देता है। समाज विचारशील हो तो इस सुअवसर को हाथ से नहीं जाने देता। वह इससे लाभ उठाकर अपने को संगठित करता है और अत्याचार को असम्भव बना डालता है। इसके विपरीत स्वार्थी अन्धा समाज अत्याचारों से टक्कर लेने वाले अपने अकेले अकेले वीरों को असहाय अवस्था में पिस मरने के लिए अकेला छोड़ देता है और निर्लज्जता से तटस्थ होकर हृदय में पत्थर रखकर उसे अपने मध्य में से मिटता हुआ देखता रहता है। वह एक

सत्य सेवक का अपने में से मिट जाना तो सह लेता है परन्तु अपने संसारी सुख भोगों में विघ्न आने की सम्भावना से घबराकर उसकी कोई सहायता नहीं करता और असंगठित पड़ा रहता है, यदि वह उस अन्याय पीड़ित की सहायता को दौड़ पड़ता तो अपने आप संगठित हो जाता।

प्रश्न होता है कि यह संगठन का काम कौन करे? क्योंकि सब लोग तो अपनी-अपनी काल्पनिक निश्चिन्ताओं में अपना-अपना अहोभाग्य मानकर सुकड़कर बैठे हैं। उनका यह अहोभाग्य काल्पनिक है। क्योंकि शांति कहीं भी नहीं है। शांति इसलिए नहीं है कि शांति की समस्या का मूल नहीं जाना जा सका। मनुष्य समाज ने शांति के नाम पर सैंकड़ों ऊटपटांग झगड़े तो खड़े कर लिए परन्तु मानव हृदय की शांति की चिरन्तन प्यास को बुझाने का आज तक कोई प्रबन्ध नहीं किया। अन्याय को हटा देने पर ही मनुष्य की शांति की प्यास बुझती है। जब तक मनुष्य समाज मिलकर अन्याय की सम्भावनायें हटाकर अपने लिए शान्ति पाने का पक्का प्रबन्ध नहीं करेगा तब तक मनुष्य की प्यास और उस प्यास को बढ़ाने वाला राजकर्मचारियों का पाप दोनों बढ़ते चले जायेंगे और शान्ति उससे दूर हटती चली जायेगी।

अन्याय को सहने की भावना मनुष्य समाज का महा भयंकर दोष है। अन्याय को सहने का स्वभाव ही अन्याय करवाता है। बहुत से लोग अन्याय के सम्बन्ध में उदासीनता दिखाते हैं। बहुत से तो इस उदासीनता को आध्यात्मिकता तक में सम्मिलित करते पाये जाते हैं। इस भावना ने देश को बड़ी हानि पहुंचाई है। इससे अत्याचारियों को बड़ा भारी समर्थन हाथ आगया है। उदास होकर अपने समाज पर होते हुए अत्याचार को कुछ न होते हुए के समान देखते रहना और उसके विरुद्ध खड़ा न होना स्पष्ट रूप से दासता है। यह आध्यात्मिकता नहीं है। दासता के विरुद्ध वे ही लोग खड़े होंगे जो स्वार्थ मोह में न फंसे होंगे और सच्चे आध्यात्मिक होंगे। दासता के विरोध में खड़ा होना हल्ला ही हल्ला मचाने वालों का काम नहीं है। इसे तो केवल विचारशील मनुष्य कर सकते हैं। विचारशील मनुष्यों से ही समाज की शांति सुरक्षित रहती है।

सत्य असत्य या न्याय अन्याय का यह झगड़ा मनुष्य समाज में सदा से है और सदा रहेगा। शांति चाहनेवाले मनुष्य समाज को सदा ही इस झगड़े को मिटाना पड़ेगा। उसे कभी भी इसे मिटाने में प्रमाद नहीं करना होगा। तब ही उसे शाँति मिलेगी। नहीं तो नहीं मिलेगी। अन्याय को हटाने से ही शाँति मिलती है। शाँति का स्वभाव बड़ा विचित्र है। वह उदास रहनेवाले को नहीं मिलती। वह तो अन्यायरूपी अशाँति का सिर कुचलने वालों को मिलती है।

दुर्भाग्य से हमारे देश की सामाजिक मनोदशा इतनी बिगड़ चुकी है कि वह अपना अन्यायों के विरोध करने के उस स्वाभाविक अधिकार को भी छोड़ बैठी है जिसके पलटे में उसने कभी राजसत्ता को शासनाधिकार दिया था और अब अत्याचारों का विरोध करने तक से बचने लगी है। वह उदास रहने में ही अपनी भलाई समझने लगी है। देश के समझदार श्रेणी के कहाने वाले लोग भी उद्धत शासकों का केवल विचार करने से नहीं किन्तु उनका अत्याचार सुनने तक से बचने लगे हैं। वे इस न सुनने का यह बहाना बनाते हैं ''ऐसे अत्याचार बहुत रो रहे हैं। इसलिए देश को अत्याचार सहन करना चाहिये।'' यह कथन असार है। क्योंकि यह युक्ति देश के प्रतिष्ठित मनुष्यों के मुख से भी सुनी जाती है।

इसलिए आइये इसकी असारता पर विचार करें- जब ये लोग कहते हैं कि ऐसे अत्याचार बहुत हो रहे हैं इसलिए सहन करना चाहिये। तब इस कथन से यह समझा जाता है कि अत्याचार न्यून होने पर अर्थात् जब विरोध करने की आवश्यकता न रहे तब ही उनका विरोध करना उचित होगा। अविरोध की नीति ने ही अत्याचार बढ़वाया है। जिस नीति ने अत्याचार बढ़वाया है उससे न तो अपने आप अत्याचार न्यून होने की आशा है और न अत्याचार को किसी के समर्थन की आवश्यकता है।

अविरोध तो पुरुषों का स्वभाव है। अत्याचार का विरोध न करने से उसे बिना माँगे समर्थन मिल जाता है। अत्याचार का भूलकर भी समर्थन करना कापुरुषों के योग्य दासमनोवृत्ति है। ऐसी युक्तियों के पीछे यह परिणाम छिपा रहता है कि जब अत्याचार के आगे सिर न झुकानेवाले इक्के दुक्के वीर एक-एक करके अकेले अकेले समाज से त्यक्त और उपेक्षित होकर अत्याचारी के उत्पीड़न से मिट जायेंगे तब देश की मनुष्यता लुप्त होजायेगी तथा अत्याचार के विरोध में बोलने और सुनने तक की भी अवस्था नहीं रहेगी तब देश की मोहनिद्रा में विघ्न पड़ना बन्द होजायेगा।

यह बड़े दु:ख की बात है कि हमारे समाज के भले कहलाने वाले लोग भी अत्याचारी की ओर से आँखें मीचते पाये जाते हैं स्पष्ट ही ऐसे लोग भले नहीं हैं। भले तो वे हैं जो समाज के सुख-दु:ख में उसके साथ रहते और काम आते हैं, और जो समाज के किसी भी भले मनुष्य पर होने वाले अत्याचार को अपने ही ऊपर होता हुआ मानकर उसके दमन में पूरी सहायता करते हैं। जो अपनी भौतिक शक्ति को अपनी न मानकर सत्य की मानते हैं, जो उस पर अपना व्यक्तिगत अधिकार नहीं मानते, जो उसे जिस प्रकार अपने उपयोग में लाते हैं उसी प्रकार सत्य के सम्बन्ध से सुसमाज रूपी पड़ोसी की सेवा में भी सहर्ष लगा डालते हैं, जो उसका उचित उपयोग अखाड़ा होने पर कृपणता नहीं करते और जो अपनी सम्पूर्ण शक्ति से अत्याचार पीड़ित पड़ोसी की सहायता करने में आनन्द के साथ आ धमकते हैं।

इस समय हमारा समाज अत्याचारों की उद्दण्डता के आगे सिर झुकाकर खड़ा होगया है। हमारे देशवासियों का मन निर्बल होगया है। आज भारतवासियों की सामूहिक शक्ति उस सुख समृद्धि और मान प्रतिष्ठा के पीछे पड़ गई है जो अनीति और अन्याय से ही सुगमता से मिलती है। हमारे देशवासियों का सामूहिक बल सुख समृद्धि तथा मान प्रतिष्ठा के झूठे लोभ में यहां तक अन्धा होगया है कि अब वह अत्याचारियों के अत्याचारों का सहायक बन गया है। हमारे देशवासियों की सुख समृद्धि की सामूहिक इच्छा ने अत्याचारियों का दुष्ट उत्साह बढ़ा डाला है। अब अन्याय इतना बल पकड़ चुका है कि कर्त्तव्य या अधिकार पर अड़ने वाले किसी भी सच्चे मनुष्य के जीवन पर अकस्मात् विपत्ति टूट पड़ना अत्यन्त स्वाभाविक होगया है। भारत में दुष्टता का बल बढ़ता चला आ रहा है। दुष्ट लोग दिन दहाड़े अत्याचार करके समाज को दुखी कर रहे हैं। दु:ख है कि देश उनका कान तक गरम नहीं कर सक रहा है। वे यह सब इसीलिए कर सक रहे हैं कि अत्याचार को रोकनेवाली समाज की शक्तियां सोई पड़ी हैं। देश में अत्याचार का दमन करनेवाली शक्तियों का न होना ही देश की अशान्ति का स्वरूप है।

अब समाज के विचारशील मनुष्यों के ऊपर यह बड़ा भारी उत्तरदायित्व है कि वे अपने

समाज या देश में सर्वत्र न्याय और शान्ति को विजय दिलाने वाली 'न्याय भवन' नाम की संस्थायें स्थापित करके समाज को शान्ति के कंटकों को निकाल कर फेंक दें। अब समय आ चुका है और सबके मनों में यही बात घूम रही है कि हमारे समाज के विचारशील लोग अत्याचार की घटनाओं को किसी एक मनुष्य की उपेक्षा करने योग्य कष्ट कहानी न माना करें किंतु उसे न्याय पर अन्याय के आक्रमण के रूप में देखा करें। अब भारतीय हृदय स्वभाव से यह आशा करता है कि विचारशील भारतीयों के हृदयों में अन्याय तथा अत्याचार के दमन की चिन्ता जग उठे और वह समाज में शान्ति तथा कल्याण की स्थापना करें। अब भारत के विचारशील मनुष्यों को मिलकर सत्य को असत्य से, धर्म और अधर्म से और न्याय को अन्याय से बचाने के लिए सर्वत्र 'न्याय भवनों' की स्थापना करके अपनी शान्ति का स्थायी उपाय करना चाहिए। अब सब भारतीय विचारशीलों को मिलकर देश की उन सारी सुप्त शक्ति को जगाकर जो उठकर अत्याचारों का विरोध कर सकती है, सर्वत्र 'न्याय भवनों' के रूप में अन्याय विरोधी व्यूह बना बनाकर खड़ी कर लेनी चाहिए।

इन न्यायभवनों का काम- (१) सार्वजनिक रूप में अत्याचार पीड़ितों की सहायता करना। (२) समाज को अत्याचारियों के विरुद्ध सावधान करना। (३) समाज का बल लेकर उससे अत्याचार का विरोध करना। (४) ऐसा प्रबन्ध करना होगा कि जिससे अत्याचारी कहीं किसी पर अन्याय न कर सकें।

नोट- विशेष जानकारी तथा फर्मादि के लिए निम्न पत्ते पर पत्र व्यवहार करें।

मंत्री- न्याय भवन, जम्मू ताबी,

(दयानन्द सन्देश से साभार)

हर्ष सूचना

चौ० भूपेन्द्रसिंह जी हुड्डा का हार्दिक धन्यवाद

स्वामी ओमानन्द जी सरस्वती (आचार्य भगवान्देव जी) आचार्य गुरुकुल झज्जर ने हरयाणा का प्राचीन लुप्त इतिहास खोजने के लिए सन् १९६० में पुरातत्त्व संग्रहालय की स्थापना की थी। इसके लिए पूरे हरयाणा के प्राचीन खण्डहरों से सिक्के, मोहरें, सांचे, मृन्मूर्तियां, प्रस्तरमूर्तियां, मणके, शस्त्रास्त्र आदि का संग्रह करना आरम्भ कर दिया और उस संग्रह ने एक विशाल पुरातत्त्व संग्रहालय का रूप धारण कर लिया। इस सामग्री के आधार पर अनेक शोध ग्रन्थ प्रकाशित हुए। देखते-देखते यह संग्रहालय विश्वभर में प्रसिद्ध होगया।

इसके महत्त्व को देखते हुए हरयाणा के मुख्यमंत्री माननीय श्री चौ० भूपेन्द्रसिंह जी हुड्डा ने स्वामी ओमानन्द जी की स्मृति में संग्रहालय का नूतनभवन सरकार की ओर से बनाने के लिए सहर्ष स्वीकृति प्रदान की है। एतदर्थ सभी हरयाणावासी आपके अत्यन्त आभारी हैं। सरकार के सहयोग से इसकी सुरक्षा के साथ साथ इस दुर्लभ सामग्री का प्रकाशन भी सम्भव होसकेगा, जिससे उन लोगों की धारणा बदल जायेगी जो हरयाणा की संस्कृति को केवल एग्रीकल्चर संस्कृति मानते हैं। जब कलाकृति के ग्रन्थ जनसाधारण तक पहुंचेंगे तो सारे विश्व को हरयाणा की प्राचीन कला का लोहा मानना पड़ेगा। ईश्वर करे यह योजना शीघ्र ही क्रियात्मक रूप धारण करे।

— निवेदक
विरजानन्द दैवकरणि
निदेशक, पुरातत्त्व संग्रहालय गुरुकुल झज्जर

प्रस्थानत्रयी-पदानुक्रम-कोषः - एक समीक्षा

—प्रोफेसर ज्ञानप्रकाश शास्त्री,
डॉ० विजय कुमार त्यागी
परिमल पब्लिकेशन्स २७/२८ शक्तिनगर,
दिल्ली-७

वेदान्त के तीन प्रस्थान हैं। श्रौत-प्रस्थान उपनिषद् हैं, जो वेद के ही अङ्ग हैं, दूसरा स्मार्त-प्रस्थान है, जो गीता है और तीसरा प्रस्थान दार्शनिक है, जो वेदव्यासप्रणीत ब्रह्मसूत्र है। इन प्रस्थानत्रय के आधार पर समस्त वेदान्त साहित्य की रचना हुई है- ऐसी परम्परागत विद्वानों की मान्यता है। इन्हीं पर भाष्य लिखकर महात्माओं और धर्मप्रवर्तकों ने आचार्य पदवी प्राप्त की है। मध्यकाल में देश की यही प्रणाली थी कि प्रस्थानत्रय पर भाष्य रचकर अपने सिद्धान्तों की पुष्टि एवं प्रचार किया जाता था। इनका समन्यवय भाष्यों द्वारा किये बिना किसी सिद्धान्त को वेद या धर्ममूलक कहने का कोई साहस नहीं कर सकता था। मतलब यह कि सिद्धान्तप्रतिपादित स्वतंत्र ग्रन्थरचना की अपेक्षा प्रस्थानत्रयी पर भाष्य लिखने को अधिक महत्त्व दिया गया था और भाष्यों के समन्वय से अपने मत की पुष्टि की जाती थी। आचार्य शङ्कर ने उक्त तीनों प्रस्थानों पर अपने भाष्य लिखे हैं। प्रमुख उपनिषदों पर न केवल आचार्य शंकर ने ही भाष्य लिखे अपितु उपनिषद् ब्रह्मयोगिन् और राघवेन्द्र यति ने भी अपने-अपने भाष्य संस्कृत में लिखे हैं। काशिकानन्द गिरी द्वारा तो आचार्य शंकरकृत उपनिषदों में से कतिपय उपनिषदों पर जयमङ्गलीय वार्तिकवृत्ति भी लिखी गई है। वेदान्त दीक्षित और माधव ने भी अपनी व्याख्याएँ उपनिषदों पर लिखी हैं। आर्यसमाजी विद्वानों में से संस्कृत में भाष्य पण्डित भीमसेन शर्मा द्वारा किया गया है। हिन्दी भाषा में स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती, नारायण स्वामी जी महाराज, डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार, महामहोपाध्याय पण्डित आर्यमुनि और पण्डित रामनाथ वेदालङ्कार आदि द्वारा की गई व्याख्याएँ मिलती हैं।

प्रमुख उपनिषदों को आधार बनाकर उनके निर्वचनों पर 'द उपनिषदिक एटिमोलोजीस' के नाम से प्रोफेसर मानसिंह ने काम किया है। आर.एन. दाण्डेकर को 'वैदिक बिब्लियोग्राफी' में 'द न्यू कॉन्सेप्च्यूअल फिलोसोफिकल कॉन्कॉर्डेन्स टू द उपनिषद्स', जैकबकृत 'उपनिषद् वाक्यकोष', जी.एस. साधलेकृत 'उपनिषद् वाक्य महाकोष' और एन.एस. सुब्रह्मण्यम् कृत 'एन्साक्लोपीडिया ऑफ द उपनिषद्स' का उल्लेख प्राप्त होता है। इसी शृंखला में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कोषनिर्माण कला में दक्ष बहुपठित और ''बाहुश्रुत्येन तपसा नियोगैः'' आचार्य शौनक की इस उक्ति को चरितार्थ करने वाले प्रोफेसर ज्ञानप्रकाश शास्त्री ने डॉ० विजय कुमार त्यागी के सहयोग से 'प्रस्थानत्रयी पदानुक्रमकोष' की रचना वी.वी.आर.आई. होशियारपुर से अनेक भागों में निर्मित 'वैदिक पदानुक्रमकोष' की शैली पर की है। यह कोष अपने क्षेत्र में मील का पत्थर सिद्ध होगा। क्योंकि अभी तक हिन्दीभाषा में प्रस्थानत्रयी पर इस तरह के पदानुक्रमकोष का अभाव था, जिसकी पूर्ति गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के प्रो० ज्ञानप्रकाश

शास्त्री ने की है। इसमें १४९३६ पदों की प्रविष्टियाँ हैं। कोष के परिशिष्ट में १५० औपनिषदिक निर्वचनों को भी संकलित किया गया है, जो कि परवर्ती उन शोधार्थियों के लिए जो कि निर्वचनों पर कार्य करना चाहते हैं, उपयोगी सिद्ध होगा। संस्कृतसाहित्य कोष की दृष्टि से समृद्ध रहा है। निघण्टु से प्रारम्भ हुई इस कोष की यात्रा अमरकोष आदि के रूप में आगे बढ़ती हुई वाचस्पत्यम्, शब्दकल्पद्रुम, हलायुधकोष, मोनियरविलियम्सकृत संस्कृत-इंग्लिश कोष, वामन शिवराम आप्टेकृत संस्कृत-हिन्दी कोष और आचार्य राजवीर शास्त्री कृत ''वैदिक कोष'' के रूप में विकसित होती हुई, आज भी निरन्तर प्रवाहमान है। वर्तमान युग में आचार्य विश्वबन्धु शास्त्री ने इसको एक नया आयाम प्रदान किया। उन्होंने समस्त वैदिक साहित्य को आधार बनाकर वैदिक पदानुक्रम कोष की परम्परा का शुभारम्भ किया। इस नवीन और अध्ययन की दृष्टि से उपयोगी पद्धति को आधार बनाकर इस परम्परा को आगे बढ़ाया है गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के प्रोफेसर ज्ञानप्रकाश शास्त्री ने। प्रोफेसर ज्ञानप्रकाश शास्त्री ने इससे पूर्व इस पद्धति को 'ऋग्भाष्यपदार्थकोषः' का निर्माण कर गति दी। इसी शृंखला में इनका यह कोषरत्न इनकी लेखनी से प्रसूत है। उक्त कोष पदानुक्रम कोष है फिर भी यह पदार्थकोष की भी अनुभूति कराता है। कठिन शब्दों की दुरूहता को देखकर लेखक ने आचार्य शंकर के भाष्यों के आधार पर उस दुरूहता का समाधान करने का उत्तम प्रयास किया है। कठिन और अप्रयुक्त शब्दों के अर्थ उक्त कोष में स्वाभाविक रूप से दिये गये हैं। इन पदों के स्पष्टीकरण में जहां कहीं कोषकार शङ्करमत से सहमत नहीं हैं तो वहाँ उसने अपना मत भी टिप्पणीरूप में दिया है और शङ्करभाष्य की असमीचीनता भी दर्शायी है (पृष्ठ ८५)। एक ही शब्द के शङ्कर द्वारा निर्दिष्ट वे अर्थ भी दिये हैं जो भिन्न भिन्न उपनिषदों में भिन्न हैं (पृष्ठ १००, १०८, १२८)। कोषकार ने इस कोष में पद को अर्थ की इकाई मानते हुए उनको व्यस्त रूप में दिया है। जैसा कि हम पहले लिख चुके हैं कि यह कोष पदानुक्रमकोष है और यह पदार्थकोष की अनुभूति कराता है। यद्यपि इसको पूर्ण पदार्थकोष बना दिया जाता तो इसकी उपयोगिता अधिक होती। भले ही इसको आचार्य शङ्कर के भाष्यानुसार ही रखा जाता। दुरूह शब्दार्थों में अन्य भाष्यकारों का भी अर्थ आ जाता तो इस कोष की अनुसन्धानोपादेयता बढ़ सकती थी। इस कोष में बृहदराण्यकोपनिषद् और छान्दोग्योपनिषद् से अधिक पदों के अर्थ दिये गये हैं।

गुरुकुल के वर्तमानकालिक विद्वानों ने वैदिक वाङ्मय की अनेक परियोजनाओं को अपने हाथ में लेकर अनेक कोषों का निर्माण किया है। इनमें जहाँ प्रोफेसर रूपकिशोर शास्त्री ने 'वैदिक वाङ्मय निरुक्ति-कोष' और 'उणादिवृत्तिगत निरुक्ति-कोष' का निर्माण कर विश्वविद्यालय का यश फैलाया वहीं प्रोफेसर दिनेशचन्द्र शास्त्री ने भी वैदिक संहिताओं में समागत हजारों उपमाओं का सङ्कलन एवं उनका विवेचन कर 'वैदिक उपमा कोष' का निर्माण किया है। इन उपमाकोष में लेखक ने मैक्समूलर आदि पाश्चात्य विद्वानों की अलीक मान्यताओं का खण्डन भी किया है। इन सभी विद्वानों के प्रेरणास्रोत के रूप में डॉ० ज्ञानप्रकाश शास्त्री ने कार्य किया है। प्रस्तुत 'प्रस्थानत्रयी पदानुक्रमकोष' गुरुकुल विश्वविद्यालय के विद्वानों के द्वारा लिखित

कोष परम्परा को आगे बढ़ाता है। इस कोष का प्रकाशन परिमल प्रकाशन, दिल्ली ने किया है।

आचार्य शंकर की विचारधारा को समझने में यह तुलनात्मक पदानुक्रमकोष उपयोगी सिद्ध होगा, जिससे अनुसन्धित्सुओं को इस विचारधारा की सत्यता को परखने में सहायता मिलेगी कि आचार्य शंकर के अद्वैतवाद की मान्यता कितनी उपयोगी या अनुपयोगी रही है? जीव और ब्रह्म की एकता, आत्मा का एकत्व, जगत् का मिथ्यात्व, अनिर्वचनीय दृष्टि, सर्वं ब्रह्ममयं जगत्, जीवात्मा की उपाधिजन्यता, अविवेक या अविद्या का आश्रय ब्रह्म, ज्ञान और कर्म का समुच्चय न हो- आदि मान्याओं की आधारभूमि कितनी मजबूत है और आचार्य शंकर ने इनको कितनी मान्यता प्रदान की है इसका परिज्ञान इस ग्रन्थ के माध्यम से अपनी-अपनी समीक्षानिकष पर परखा जा सकेगा। इससे यह भी पता चलेगा कि आचार्य शंकर के मत में श्रुति का स्वारस्य नहीं है तथा उनके ग्रन्थों में प्रस्थानत्रयी भाष्य में वदतोव्याघात की भरमार है। इस प्रकार यदि कोई अद्वैत वेदान्त को न मानने वाला प्रस्थानत्रयी भाष्य में व्यक्त मत को निराधार सिद्ध कर उज्ज्वल पक्ष स्थापित करे तो तटस्थ विचारकों को इस प्रस्थानत्रयीपदानुक्रमकोष से अवश्य लाभ होगा। मुझे विश्वास है कि यह कोष कोषपरम्परा में मील का पत्थर सिद्ध होगा और इससे प्रस्थानत्रयी के किसी भी शब्द को खोजने की सुविधा भी पाठकों को उपलब्ध होगी।

-प्रो० दिनेशचन्द्र शास्त्री

अध्यक्ष- वेदविभाग

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

महर्षि दयानन्द सरस्वती, राष्ट्र और राष्ट्रधर्म, स्वतंत्रता एवं वेद

— श्री पं० बिहारीलालजी शास्त्री उझानी

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने निराकार परमेश्वर की वेदविद्या को अपने जीवन में उतारकर बताया है कि राष्ट्र-सेवा मानव-सेवा है। विश्व की वैदिक संस्कृति और सभ्यता का आदि स्रोत वेद है। वेद के पढ़े बिना भारत की संस्कृति-सभ्यता और धर्म के दृढ़ निर्भय विचार जीवित नहीं रह सकते। वेद-प्रसार से ही निर्भय मन राष्ट्र-सेवा का भार उठा सकता है। इसलिये भारतवासियों का पहला धर्म वेद विद्या का पढ़ना और पढ़ाना है।

धर्म का मार्ग बड़ा टेढ़ा, लम्बा, भयानक और कांटों भरा तंग होता है। कोई विरला ही इस मार्ग को तय कर अन्त में आनन्द तथा परमानन्द को प्राप्त करने का भागी होता है।

दूसरा मार्ग अधर्म का है वह बड़ा सीधा-साफ-सुथरा प्रतीत होता है। उस पर चलते-चलते मनुष्य ऐसा मदहोश हो जाता है, उसे यह ज्ञान नहीं रहता कि यह रास्ता कहां जा रहा है और उसे कहां जाना है? कहां से कहां चला आया के चक्कर में ऐसा फंस जाता है, जहां से आयुभर निकलना दूभर हो जाता है।

महर्षि ने सब सत्यविद्या वेद से प्राप्त की थी। उनके जीवन के दो भाग हैं। एक भाग वह है जिसमें अमरजीवन का यह अन्वेषक अमृत के स्रोत की खोज में फिरता रहा। दूसरे भाग में वह स्वयं अमृतपान करने के बाद मनुष्यमात्र को अमृत पिलाने का यत्न करता रहा। जीवन के दोनों भागों में हम उन्हें पुरुषार्थ करते हुए पाते हैं। एक भाग में अपने लिये, दूसरे भाग में दूसरों के लिये। जीवन के दोनों भागों में हम उन्हें कष्टों की कठोर चट्टानों से घिरा पाते हैं। दोनों भागों में महर्षि पूर्ण सफल रहे हैं। गुलामी और अज्ञानान्धकार में डूबे भारत को स्वस्ति और शान्ति के शक्ति-संगठन की ज्योति दिलाने वाला महर्षि दयानन्द सरस्वती इस युग का महर्षि था।

परमेश्वर के महाकाव्य वेद (अथर्व २.२८.४) से महर्षि ने देश-रक्षा और वेद-रक्षा का व्रत लिया था।

-विद्यावाचस्पति वेदपाल वर्मा शास्त्री

मालदाबाग, पुरानी गुड़ मण्डी

शाहरपुर, जनपद- मु०नगर (उ०प्र०)

२५२३२८

चलभाष - ९९२७५७५७७७

प्राकृतिक सौन्दर्य के देश दक्षिण अफ्रीका से एक पत्र

समादरणीय आर्यप्रवर, सादर नमस्ते।

ईश्वर कृपया अत्र कुशलं तत्रास्तु।

२० नवम्बर २०१३ को मुंबई से ९ घंटे की यात्रा के उपरान्त जोहान्सबर्ग के प्रसिद्ध एयरपोर्ट पर पहुंचे। ये हमारी सातवीं विदेश यात्रा है। हिन्द व अटलांटिक दो महासागरों की उत्ताल तरंगों का स्पर्श करता हुआ अफ्रीका महाद्वीप का दूसरा सबसे बड़ा देश दक्षिणी अफ्रीका है। मुंबई से इसकी दूरी सात हजार किलोमीटर है। १२ लाख वर्ग किलोमीटर का क्षेत्रफल होने से भारत के यह बिहार सदृश तेरह प्रान्तों के बराबर है। यहां की जनसंख्या ५५ करोड़ है जिसमें ७९.८ प्रतिशत ईसाई, .३ प्रतिशत पारम्परिक अफ्रीकी आदिवासी धर्म के अनुयायी १.५ प्रतिशत मुस्लिम और १.२ प्रतिशत हिन्दू है इनमें लगभग ५० हजार व्यक्ति आर्यसमाज से प्रभावित हैं। इस देश की तीन राजधानी है प्रिटोरिया। (कार्यपालिका), बोनफोन्टेन (न्यायपालिका), केपटाऊन (विधायिका)। इस देश में ९ राज्य व ५२ जिले हैं और माध्यमिक तक शिक्षा निःशुल्क होने से ८९ प्रतिशत प्रजा साक्षर है। २३ विश्वविद्यालय हैं। यहां की मुद्रा को Rand (Zar) कहते हैं जो भारत के ६.५० रुपये के बराबर है। यहां के प्राकृतिक सौन्दर्य को देखने विश्व के ३० लाख पर्यटक प्रतिवर्ष आते हैं। १४८७ में पुर्तगाल नाविक वार्त्तो लोम्यू के यहां पहुंचने से लेकर विदेशियों ने इसका सर्वविध शोषण किया है। डचों व ब्रिटिश अंग्रेजों ने यहां के काले आदिवासियों पर तीन शताब्दियों तक अमानवीय

Arya Samaj Swami Dayanand Building
21 Carlisle street Durban-4001
South Africa

अत्याचार किये हैं। भारत, मेडागास्कर, इंडोनेशिया से दासों को लाकर कोड़े मार मारकर इनसे काम करवाया है। १८६७ व इसके बाद यहां की भूमि पर सोना, हीरा, प्लेटिनियम आदि बहुमूल्य धातुओं का पता चला। पहले छोटे छोटे कबीलों में चलने वाला देश १९१० में संगठित देश घोषित किया गया। अत्रत्य काले लोगों को पद, शिक्षा, साधन, सुविधा, चिकित्सा, न्याय आदि सभी क्षेत्रों में ये गोरे अंग्रेज अपमानित करते थे। इसी का गांधी जी ने विरोध किया और इन लोगों को संगठित कर आंदोलन को मुखर किया। ३१ मई १९६१ को महारानी एलिजाबेथ ने स्वयं को यहां की साम्राज्ञी घोषित कर वर्षों से कार्यरत ब्रिटेन के मंत्रिपरिषद् को समाप्त कर अत्रत्य संसद व चुनाव प्रणाली को मान्यता दे दी। गोरों कालों का वर्णभेद फिर भी बना रहा। गोरों व यहां के लोगों से उत्पन्न गौरवर्णीय लोग जो यहीं बने रहे, उनकी नेशनल पार्टी का वर्चस्व बना रहा। महात्मा गांधी जी द्वारा स्थापित अफ्रीकन नेशनल कांग्रेस पर प्रतिबंध लगा दिया गया और श्री नेल्सन मंडेला २७ साल जेल में बंद रहे। विश्व जनमत के आगे विवश हो, १९९० में उन्हें आजाद किया गया। बाद में देश के राष्ट्रपति भी बने। यहां वह स्थान भी हमें देखने को मिला जहां उनका प्रथम व्याख्यान सुनने के लिए दस लाख लोग एकत्रित हुए थे। १९०५ में भाई परमानन्द जी ने दक्षिण अफ्रीका में आर्यसमाज

की स्थापना की थी। १५ मंदिरों सहित आर्यसमाज की २६ संस्थायें इस देश में कार्यरत हैं। २८ नवम्बर से १ दिसंबर २०१३ तक World Vedic Conference 2013 का आयोजन डरबन में किया गया था। विश्व के अनेक देशों से आये सुयोग्य विद्वान् मनीषियों ने अपने अपने शोधपत्रों का वाचन किया। Hindu Unity हिन्दुओं की एकता विषय पर हमें अपने वक्तव्य का सुअवसर प्राप्त हुआ। अथर्ववेद के मंत्र की व्याख्या करते हुए हिन्दुओं सहित पूरी मानव जाति को सुखी, शांत, समृद्ध, आनन्दित रखने के उपायों को हमने इस विषय को स्पष्ट करने के लिए बताया। प्रकारान्तर से गुरुकुलीय तपश्चर्या व आर्यों के योगदान को इसमें साधन बताया। अहिन्दी भाषी विशाल जनसमूह के समक्ष ऋषिऋण को चुकाना है–आर्य राष्ट्र बनाना है। क्रांतिकारी भजन की पंक्तियां गुनगुनाते हुए व्याख्यान समाप्त किया। प्रभुकृपा से सभी पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा। सांस्कृतिक गीतों के कार्यक्रम में आये हुए दक्षिणी अफ्रीका में भारत के महामहिम राजदूत श्रीयुत वीरेन्द्र गुप्ता जी (Indian High Commissioner) तथा दूसरे दिन आये श्री ही.के. शर्मा जी (Consulate general of India) से पृथक् पृथक् मिलकर हमने वैदिक साहित्य भेंट किया और उसे पढ़ने की प्रेरणा दी। आर्यप्रतिनिधिसभा के वरिष्ठ अधिकारी डॉ० रामविलास जी को भी आंग्लभाषा का वैदिक साहित्य दिया। 99 प्रतिशत जन शराबी व मांसाहारी हैं। छोटे से देश में सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त कैसीनो (जुआघर) २५ से ज्यादा हैं। प्रतिदिन ५० से ज्यादा हत्यायें की जाती हैं। एक वर्ष में ५ लाख से ज्यादा कन्यायें दुष्कर्म का शिकार होती हैं। असुरक्षा के भय से ४ लाख सुरक्षाकर्मी नौ हजार निजी कंपनियों के माध्यम से कार्यरत हैं जो कि पुलिस व सेना की कुल संख्या से ज्यादा हैं। दर्शनीय स्थलों में कृत्रिम लहरों की घाटी Valley of the waves, Cango Caves जहां हजारों वर्षों में चूने के ग्लेशियर बन गये हैं, ७ प्राकृतिक आश्चर्यों में एक Table Mountains (मेज की भाँति पर्वत), समुद्री जीव Seal, Penguins (सील व अफ्रीकन पेंग्विन) शुतुरमुर्ग के अंडे जो पाषाणवत् होने से टूटते नहीं है, शुतुरमुर्ग की सवारी, पार्लियामेंट, बोअनिकल गार्डन में सैंकड़ों प्रकार के फूल वृक्षादि, Skywalk, शेर व चीते गैंडा आदि को निकट से देखना, Vshaka Marine World में सौंप मछलियां आदि अपने कोच के आदेश पर डाल्फिन मछली का नृत्य, समुद्र तटों के अनेक प्वाइंट्स, नेलसन मंडेला जी का घर आदि प्रसिद्ध हैं। वोट बैंक के लालच में अत्रत्य सरकार आसपास के देश जिम्बाब्वे, नाईजीरिया से घुसपैठ करवा रही है। ड्रग्स व माफिया बढ़ रहे हैं। भ्रष्टाचार से प्रजा पीड़ित है। अंग्रेजों के कारण सभ्यता तो आई है, पर भाषा, धर्म, संस्कृति सब नष्टप्राय: होगये हैं। आर्यसमाज के किसी सुयोग्य विद्वान् की, जो अंग्रेजी में पूर्ण अधिकार रखता हो, आवश्यकता है। इंसान के अज्मो हिम्मत से जब दूर किनारा होता है। तूफान में टूटी किश्ती का भगवान् सहारा होता है। सर्वेभ्यो नमो वाच्यम् – आपका ही –

आचार्य आनंद पुरुषार्थी

अन्तर्राष्ट्रीय वैदिक मिशनरी

प्राचीन पाठशालाओं के खर्च की व्यवस्था

❑ श्री के.सी. श्रीवास्तव

गतांक से आगे....

सन् 1853 में ईस्ट इण्डिया कंपनी के लिए अन्तिम चार्टर एक्ट पास होने के समय भारतवासियों की शिक्षा के प्रश्न पर अनेक योग्य और अनुभवी अंग्रेजनीतिज्ञों और विद्वानों की गवाहियाँ जमा की गयी। इन गवाहियों में से उदाहरण के तौर पर दोनों पक्षों की गवाहियाँ उद्धृत करना काफी है।

4 अगस्त सन् 1853 को मेजर रॉलेण्डसन ने जो 17 वर्ष तक मद्रास प्रान्त के कमाण्डर-इन-चीफ के साथ फारसी अनुवादक रह चुका था और वहाँ की शिक्षा कमेटी का मंत्री रह चुका था, पार्लियामेंट की कमेटी के सामने इस प्रकार की गवाही दी-

प्रश्न - आपने यह राय प्रकट की है कि भारतवासियों को शिक्षा देने का नतीजा यह होता है कि वे अंग्रेज सरकार के विरुद्ध हो जाते हैं, क्या आप यह समझायेंगे कि इसका कारण क्या है और सरकार की ओर उनकी शत्रुता किस ढंग की और कैसी होती है ?

उत्तर - मेरा अनुभव यह है कि भारतवासियों को ज्यों-ज्यों ब्रिटिश राज्यकाल के भारतीय इतिहास के भीतरी हाल का पता लगता है और आमतौर पर यूरोप के इतिहास का ज्ञान होता है, त्यों त्यों उनके चित्त में यह विचार उत्पन्न होता है कि भारत जैसे एक देश का मुट्ठी भर विदेशियों के कब्जे में होना एक बहुत बड़ा अन्याय है, इससे स्वभावत: उनके चित्त में प्राय: यह इच्छा उत्पन्न हो जाती है कि वे अपने देश को इस विदेशी शासन से स्वतन्त्र करने में सहायक हों और चूंकि इस विचार को दूर करनेवाली कोई बात हमारी ओर से नहीं होती और न उनमें हमारी आज्ञापालन का भाव ही पक्का होता है, इसलिए ब्रिटिश सरकार की ओर द्रोह का भाव इन लोगों में पैदा हो जाता है।

मैंने देखा है कि हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों में यह भाव मौजूद है और मुसलमानों में अधिक है। विशेषकर जब ये लोग ब्रिटिश साम्राज्य के रहस्य को जाने जाते हैं तो उनके दिलों में असन्तोष का भाव पैदा हो जाता है और अपने हित की आशा जाग उठती है।

इसी प्रश्नोत्तर में यह भी साफ सुझाया गया है कि यदि शिक्षा के साथ भारतवासियों के दिलों में यह भय उत्पन्न करने का भी प्रयत्न किया जाय कि यदि अंग्रेज भारत से चले गये तो उत्तर दिशा की अन्य जातियाँ आकर भारत पर शासन करने लगेंगी, या भारत में अराजकता फैल जायेगी, तो इसका परिणाम भारत के लिए कहां तक हितकर होगा।

अनेक अंग्रेजों के विचार मेजर रॉलेण्डसन के विचारों से मिलते हुये थे। किन्तु दूसरों के विचार इसके विपरीत थे। उनका ख्याल था कि अशिक्षित भारतवासी शिक्षित भारतवासियों की अपेक्षा विदेशीय शासन के लिए अधिक खतरनाक होते हैं और भारतवासियों को केवल पश्चिमी शिक्षा देकर ही उन्हें राष्ट्रीयता के भावों से दूर रखा जा सकता है। प्रसिद्ध नीतिज्ञों में सर फ्रेडरिक हैलिडे की गवाही, जो बंगाल का पहला लेफ्टिनेण्ट गर्वनर हुआ और मार्शमैन की गवाही इसी अभिप्राय की थी।

पूर्वी और पश्चिमी शिक्षा का प्रश्न

एक और महत्त्वपूर्ण प्रश्न जो 19वीं शताब्दी के

प्रारम्भ से भारत के उन अंग्रेज शासकों के सामन उपस्थित था, जो भारतवासियों को शिक्षा देने के पक्ष में थे, वह यह था कि किस प्रकार की शिक्षा देना अधिक उपयोगी होगा। दो भिन्न-भिन्न विचारों के लोग उस समय के अंग्रेजों में मिलते हैं। एक वे जो भारतवासियों को प्राचीन भारतीय साहित्य, भारतीय विज्ञान और संस्कृत, फारसी, अरबी और देशी भाषायें पढ़ाने के पक्ष में थे और दूसरे वे जो उन्हें अंग्रेजी भाषा, पश्चिमी साहित्य और पश्चिमी विज्ञान की शिक्षा देना अपने लिए अधिक हितकर समझते थे। पहले विचार के लोगों को "ओरियण्टलिस्ट" और दूसरे विचार के लोगों को "आक्सिडेण्टलिस्ट" कहा जाता है, अनेक वर्षों तक इन दोनों के विचार के अंग्रेजों में खूब वाद-विवाद होता रहा। इसी बहस के दिनों में सन् 1834 में भारत के अन्दर लार्ड मैकाले का आगमन हुआ।

मैकाले भारतवासियों को प्राचीन भारतीय साहित्य की शिक्षा देने के विरुद्ध था और उन्हें अंग्रेजी भाषा, अंग्रेजी साहित्य और अंग्रेजी विज्ञान सिखाने के पक्ष में था। मैकाले का निर्णय भारतवासियों के लिए हितकर रहा हो या अहितकर, किन्तु मैकाले का उद्देश्य केवल यह था कि उच्च श्रेणी के भारतवासियों में राष्ट्रीयता के भावों को उत्पन्न होने से रोका जाय और उन्हें अंग्रेजी सत्ता के चलाने के लिये उपयोगी यंत्र बनाया जाय। अपने पक्ष का समर्थन करते हुए मैकाले ने एक स्थान पर लिखा है-"हमें भारत में इस तरह की एक श्रेणी पैदा कर देने का भरसक प्रयत्न करना चाहिये जो कि हमारे और उन करोड़ों भारतवासियों के बीच, जिन पर हम शासन करते हैं, समझाने बुझाने का काम करें। ये लोग ऐसे होने चाहियें जो कि केवल रक्त और रंग की दृष्टि से हिन्दोस्तानी हों, किन्तु जो अपनी रुचि, भाषा, भावों और विचारों की दृष्टि सें अंग्रेज हों।"

गर्वनर जनरल लॉर्ड विलियम बेण्टिक मैकाले के घनिष्ठ मित्र और उसके समान विचारों के थे। मैकाले की इस रिपोर्ट के ऊपर 7 मार्च 1835 को बेण्टिक ने आज्ञा दे दी कि-"जितना धन शिक्षा के लिए मंजूर किया जाए उसका सबसे अच्छा उपयोग यही है कि उसे केवल अंग्रेजी शिक्षा के ऊपर खर्च किया जाए।"

मैकाले के विचारों और उन पर लार्ड बैण्टिक के फैसले के नतीजे का उल्लेख करते हुए 5 जुलाई 1853 को प्रसिद्ध इतिहास लेखक प्रोफेसर एच.एच. विलसन ने पार्लियामेण्ट की सिलेक्ट कमेटी के सामने कहा—"वास्तव में हमने अंग्रेजी पढ़े-लिखों की एक पृथक् जाति बना दी है जिन्हें कि अपने देशवासियों के साथ या तो जरा भी सहानुभूति नहीं है और यदि है तो बहुत ही कम।

अंग्रेजी भाषा और अंग्रेजी साहित्य की शिक्षा के साथ-साथ जहाँ तक हो सके देशी भाषाओं को दबाना भी मैकाले और बेण्टिक दोनों का उद्देश्य था। इतिहास लेखक डॉ. डफ ने, इस विषय में बैण्टिक और मैकाले की नीति की सराहना करते हुए तुलना के तौर पर यह दिखलाते हुए कि जब कभी प्राचीन रोम निवासी किसी देश को जीतते थे तो उस देश की भाषा और साहित्य को यथाशक्ति दबाकर वहाँ के उच्च श्रेणी के लोगों में रोमन भाषा, रोमन साहित्य और रोमन आचार-विचार के प्रचार का प्रयत्न करते थे और साथ ही यह दर्शाते हुए कि यह नीति रोमन साम्राज्य के लिए कितनी हितकर साबित हुई। अंत में लिखा है—"

"........मैं यह विचार प्रकट करने का साहस करता हूँ कि भारत के अन्दर अंग्रेजी भाषा और

अंग्रेजी साहित्य को फैलाने और उसे उन्नति देने का लॉर्ड विलियम बेण्टिक का कानून भारत के अंदर अंग्रेजी राज के अब तक के इतिहास में कुशल राजनीति की सबसे जबरदस्त और अपूर्व चाल स्वीकार की जाएगी।"

डॉक्टर डफ ने अपने से पूर्व के एक-दूसरे अंग्रेज विद्वान् के विचारों का समर्थन करते हुए लिखा है कि भाषा का प्रभाव इतना जबरदस्त होता है कि जिस समय तक भारत के अंदर देशी नरेशों के साथ अंग्रेजों का पत्र-व्यवहार फारसी भाषा में होता रहेगा, उस समय तक भारतवासियों की शक्ति और उनका प्रेम दिल्ली के सम्राट् की ओर बराबर बना रहेगा। लार्ड बेण्टिक के समय तक देशी नरेशों के साथ कंपनी का समस्त पत्र-व्यवहार फारसी भाषा में हुआ करता था। बेण्टिक पहला गवर्नर जनरल था जिसने यह आज्ञा दे दी और नियम कर दिया कि भविष्य में समस्त पत्र-व्यवहार फारसी के स्थान पर अंग्रेजी भाषा में हुआ करे।

इतिहास से पता चलता है कि आयरलैंड के अंदर भी आयरिश भाषा को दबाने और यदि संभव हो तो आयरिश लोगों को अंग्रेज बना डालने के लिए वहाँ की अंग्रेज सरकार ने समय-समय पर अनेक अनोखे कानून पास किए।

यद्यपि सन् 1835 के बाद से अंग्रेज शासकों का मुख्य लक्ष्य भारत में अंग्रेजी शिक्षा के प्रचार की ओर ही रहा, फिर भी 'आरियंट-लिस्ट' और 'ऑक्सिडेंट-लिस्ट' दोनों दलों का थोड़ा बहुत विरोध इसके बीस वर्ष बाद तक भी जारी रहा। अंग्रेज शासक भारतवासियों को किसी भी प्रकार की शिक्षा देने में बराबर संकोच करते रहे। यहां तक कि लॉर्ड मैकाले की सन् 1835 की रिपोर्ट 29 वर्ष बाद सन् 1864 में पहली बार प्रकाशित की गई। किन्तु अंत में पल्ला अंग्रेजी शिक्षा में पक्षवालों का ही भारी रहा।

अंग्रेजी शिक्षा का उद्देश्य

भारत में अंग्रेज शासकों की शिक्षानीति और अंग्रेजी शिक्षा के उद्देश्य को स्पष्ट करने के लिए यहाँ अंग्रेजी शिक्षा के एक प्रबल और मुख्य पक्षपाती लार्ड मैकाले के बहनोई सर चार्ल्स ट्रैवेलियन के विचारों को उद्धृत करना आवश्यक है।

सर चार्ल्स ट्रेवेलियन ने सन् 1853 की पार्लियामेंटरी कमेटी के सामने "भारत की भिन्न-भिन्न शिक्षाप्रणालियों के राजनीतिक परिणाम" शीर्षक से एक पत्र प्रस्तुत किया। यह पत्र इतने महत्त्व का है और ब्रिटिश सरकार की शिक्षानीति का इतना स्पष्ट द्योतक है कि उसमें कुछ अंशों का इस स्थान पर उद्धृत करना आवश्यक है। भारतवासियों को अरबी और संस्कृत पढ़ाने या उनके प्राचीन विचारों और प्राचीन राष्ट्रीय साहित्य को जीवित रखने के विषय में सर चार्ल्स ट्रेवेलियन लिखता है कि इसका परिणाम यह होगा- "मुसलमानों को सदा यह बात याद आती रहेगी। हम विधर्मी ईसाइयों ने मुसलमानों के अनेक सुंदर से सुंदर प्रदेश उनसे छीनकर अपने अधीन कर लिए हैं और हिन्दुओं को सदा यह याद रहेगा कि अंग्रेज लोग इस प्रकार के अपवित्र राक्षस हैं जिनके साथ किसी तरह का मेलजोल रखना लज्जाजनक और पाप है। हमारे बड़े से बड़े शत्रु भी इससे अधिक और कुछ इच्छा नहीं कर सकते कि हम इस तरह की विद्याओं का प्रचार करें जिनसे मानव स्वभाव के उग्र से उग्र भाव हमारे विरुद्ध भड़क उठें।

इसके विपरीत अंग्रेजी साहित्य का प्रभाव अंग्रेजी राज के लिए हितकर हुए बिना नहीं रह सकता। जो भारतीय युवक हमारे साहित्य द्वारा इससे भलीभांति

परिचित हो जाते हैं वे हमें विदेशी समझना प्रायः बंद कर देते हैं। वे हमारे महापुरुषों का जिक्र उसी उत्साह के साथ करते हैं जिस उत्साह के साथ हम करते हैं। हमारी ही सी शिक्षा, हमारी ही सी रुचि और हमारे ही से रहन-सहन के कारण इन लोगों में हिंदोस्तानियत कम होती जाती है और अंग्रेजियत अधिक आ जाती है। फिर वे हमारे तीव्र विरोधी न होकर हमारे अनुयायी हो जाते हैं और उनके हृदय में हमारी ओर क्रोध न होकर वे हमारे होशियार और उत्साही मददगार बन जाते हैं। फिर वे हमें अपने देश से बाहर निकालने के प्रचंड उपाय सोचना बंद कर देते हैं।''

''जब तक हिन्दोस्तानियों को अपनी पहली स्वाधीनता के विषय में सोचने का मौका मिलता रहेगा, तब तक उनके सामने अपनी दशा सुधारने का एकमात्र उपाय यह रहेगा कि वे अंग्रेजों को तुरन्त देश से निकालकर बाहर कर दें। पुराने तर्ज के भारतीय देशभक्तों के सामने इसके सिवा और कोई उपाय नहीं है। उनमें राष्ट्रीय विचारों को दूसरी ओर मोड़ने का केवल एक ही उपाय है और वह यह कि उनके अंदर पाश्चात्य शिक्षा-सभ्यता के विचार पैदा कर दिए जाएं। जो युवक हमारे स्कूलों और कॉलेजों में पढ़ते हैं वे उस असभ्य स्वेच्छाशासन को जिसके अधीन उनके पूर्वज रहा करते थे, घृणा की दृष्टि से देखने लगते हैं और फिर अपनी राष्ट्रीय संस्थाओं को अंग्रेजी ढंग पर ढालने की आशा करने लगते हैं। उनके दिलों में यह विचार नहीं होना चाहिए कि हम अंग्रेजों को निकालकर समुद्र में फेंक दें। इससे वे अपनी उन्नति का कोई विचार तक नहीं कर सकेंगे। इससे वे अंग्रेजों की शिक्षा और अंग्रेजों की रक्षा पर सर्वथा निर्भर हो जायेंगे।''

शेष अगले अंक में....(क्रमशः)

गोवंश हत्या के दुष्परिणाम एवं गोरक्षा के उपाय

❑ **कन्हैयालाल आर्य,** *कोषाध्यक्ष*
आर्य प्रतिनिधि सभा, हरयाणा

ईश्वर ने मनुष्य के जीवन को गाय से जोड़ दिया है। बिना गाय के मनुष्य आरोग्यतापूर्वक जीवित नहीं रह सकता। अतः प्रत्येक घर में अधिक संख्या में गाय पाली जाती थी। गाय-बैल परिवार का सदस्य माना जाता था। गाय के बिना घर मरघट के समान माना जाता था। पहले हर चौराहे और हर गली में दूध, मलाई की दुकानें होती थी। आज हर चौराहे और हर गली में अण्डा, चाय, शराब और मांस की दुकाने हैं। ऐसा क्यों? औषधि सेवन करने के लिए भी गोदुग्ध एवं गोघृत मिलना असम्भव होगया है? क्या यही मानव रक्षा है।

भारत ही नहीं अपितु पूरे विश्व में मानव जगत् की चार मुख्य समस्याएं हैं :

1. उत्पादन, 2. जनसंख्या, 3. आरोग्यता, 4. प्राकृतिक अनुकूलता। इन चारों समस्याओं का स्थायी समाधान गोवंश हत्या बन्दी है। गोसंवर्धन और असंख्य पशु पक्षी की हत्या बन्दी है। आज सम्पूर्ण विश्व में विशेष रूप से भारत में जितनी भी आर्थिक नीतियां हैं वे सभी गोवंश हत्या से उत्पन्न दुष्परिणामों का प्रतिरोध करने वाली प्रतिरोधी अर्थनीतियां हैं। दूसरे शब्दों में गोवंश की हत्या से जो विभिन्न प्रकार की क्षतियाँ हो रही हैं, उन क्षतियों की पूर्ति करने में सरकार और जनता दोनों परेशान हैं।

अधिक मात्रा में गोदुग्ध एवं गोघृत खाने वाले व्यक्तियों के शरीर में चर्बी अधिक होने के कारण सन्तान कम होती है और रूखा सूखा खाने वाले व्यक्ति को अधिक। गोदुग्ध एवं गोघृत के अभाव में

जनसंख्या द्रुगति से बढ़ती गई। ईश्वरीय प्राकृतिक व्यवस्था को बिगाड़ कर गर्भनिरोधक नशाबन्दी आदि कृत्रिम व्यवस्था की जा रही है। करोड़ों वर्षों से मानव धरती पर है। कभी आज की तरह जनसंख्या वृद्धि का संकट नहीं आया। लेकिन केवल पिछले सौ वर्षों के अन्दर जनसंख्या वृद्धि क संकट क्यों? गोवंश की कमी का यह दुष्परिणाम है। आदि काल से गोवंश मानव को स्वस्थ, निरोग, हृष्ट-पुष्ट बलवान् और सुख समृद्धि से भरपूर बनाते हुए जनसंख्या को भी नियंत्रित करता आया है।

गोबर-गोमूत्र की जैविक खाद के अभाव में विनाशकारी कृत्रिम रासायनिक खाद, पौधों की विषैली दवाओं और बैलों के अभाव में ट्रैक्टरों का प्रयोग करना पड़ रहा है।

गोदुग्ध एवं गोघृत के अभाव में नकली दूध, नकली घी (वनस्पति घी) और रासायनिक खाद तथा पौधों की विषैली दवाओं के छिड़कने से उपजाये गये रोगमुक्त एवं विषाक्त अन्न, शाक, सब्जी खाने के कारण भारत का व्यक्ति रोगी बन गया। दवा, डॉक्टर और हस्पताल में अरबों रुपये प्रतिदिन व्यय हो रहे हैं। जो गोवंश हत्या से प्राप्त विदेश मुद्रा की अपेक्षा हजार गुना अधिक मूल्यवान है।

वास्तव में यह सभी प्रतिरोधी उद्योग धन्धे केवल गोवंश हत्या से उत्पन्न दुष्परिणामों की रोकथाम मात्र है। ये हमारी कोई सुख समृद्धि के प्रतीक नहीं है। यह तो जनता पर बढ़ता हुआ आर्थिक बोझ है। गोवंश हत्या कर गोमांस, गोचर्म आदि के विक्रय से जितना आर्थिक लाभ हो रहा है। उससे लाख गुणा अधिक गोवंश हत्या से होने वाली क्षतियों की पूर्ति में व्यय करना पड़ रहा है। फिर भी क्षतिपूर्ति असम्भव प्रतीत हो रही है। गोवंश की हत्या करवाने वाली सरकार हानि में भी लाभ देख रही है।

गोवंश हत्या बन्दी की अवस्था में धीरे-धीरे कृत्रिम अर्थव्यवस्था समाप्त होगी और जैसे जैसे गोवंश की संख्या बढ़ेगी तथा उसका संवर्धन होगा वैसे वैसे ईश्वरीय प्राकृतिक व्यवस्था के अनुसार स्वतः अपनी ही गति से गतिमान अर्थव्यवस्था उत्पन्न होगी। सभी प्रतिक्रियावादी नकली घी (वनस्पति घी), नकली दूध, रासायनिक खाद, कीटनाशक, गर्भनिरोधक, नशाबन्दी, ट्रैक्टरों से खेत की जुताई और प्रतिक्रियावादी सभी कल कारखाने बन्द हो जायेंगे। सौ दो सौ वर्षों में जब धरती के अन्दर का तेल भण्डार समाप्त होगा अथवा अरब आदि देश किसी कारणवश तेल देना बन्द कर देंगे तो खेतों की जुताई असम्भव हो जायेगी और आने वाली पीढ़ियां हमें कोसेंगी, चूंकि गोवंश हत्याके कारण बैल समाप्ति की ओर है। ट्रैक्टर चलेगा नहीं और बैल रहेगा नहीं तो हमारा तथा कथित विकास धरा का धरा रह जायेगा।

आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी गोकरुणानिधि में एक गाय की एक पीढ़ी के द्वारा हमारा कितना उपकार होता है उस का वर्णन किया है।

जो एक गाय न्यून से न्यून दो सेर दूध देती है, और दूसरी बीस सेर तो प्रत्येक गाय के ग्यारह सेर दूध होने में कोई शंका नहीं। इस हिसाब से एक मास में 8.25 सवा आठ मन दूध होता है। एक गाय कम से कम 6 महीने, और दूसरी अधिक से अधिक 18 महीने तक दूध देती है, तो दोनों का मध्य भाग प्रत्येक गाय के दूध देने में बारह महीने होते हैं। इस हिसाब से बारह महीनों का दूध 99 (निन्नयानवें) मन होता है।

इतने दूध को औटा कर प्रति सेर में एक छटांक चावल और डेढ छटांक चीनी डाल कर खीर बना खावें तो प्रत्येक पुरुष के लिए दो सेर दूध की खर पुष्फल होती है। क्योंकि यह भी एक मध्य भाग की गिनती है, अर्थात् कोई दो सेर दूध की खीर से अधिक खा गया ओर कोई न्यून, इस हिसाब से एक प्रसूता गाय के दूध से 1980 (एक हजार नौ सौ अस्सी) मनुष्य एक बार तृप्त होते हैं। गाय न्यून से न्यून 8 और अधिक से अधिक 18 बार ब्याती है, इसका मध्य भाग तेरह बार आया तो 25740 मनुष्य एक गाय के जन्म भर के दूध मात्र से एक बार तृप्त हो सकता है।

इस गाय की एक पीढ़ी में छः बछियाँ और सात बछड़े हुए, इनमें से एक की मृत्यु रोगादि से होना सम्भव है, तो भी बारह रहे। उन छः बछियाओं के दूध मात्र से उक्त प्रकार 154440 मनुष्यों का पालन हो सकता है। अब रहे छः बैल, उनमें एक जोड़ी से दोनों साख में 200 दो सौ मन अन्न उत्पन्न हो सकता है। इस प्रकार तीन जोड़ी 600 (छः सौ) मन अन्न उत्पन्न कर सकती है और उनके कार्य का मध्य भाग आठ वर्ष है। इस हिसाब से 4800 (चार हजार आठ सौ) मन अन्न उत्पन्न करने की शक्ति एक जन्म में तीनों जोड़ी की है। चार हजार आठ सौ मन अन्न से प्रत्येक मनुष्य का तीन पाव अन्न भोजन में गिने, तो 256000 (दो लाख छप्पन हजार) मनुष्यों का एक बार भोजन होता है। दूध और अन्न को मिला देखने से निश्चय है कि 410440 (चार लाख दस हजार चार सौ चालीस) मनुष्यों का पालन एक बार के भोजन से होता है। अब छः गाय की पीढ़ी पर पीढ़ियों का हिसाब लगाकर देखा जावे तो असंख्य मनुष्यों का पालन हो सकता है और इसके मांस से अनुमान है कि केवल अस्सी मांसाहारी मनुष्य एक बार तृप्त हो सकते हैं। देखो! तुच्छ लाभ के लिए लाखों प्राणियों को मार असंख्य मनुष्यों की हानि करना महापाप क्यों नहीं?

यद्यपि गाय के दूध से भैंस का दूध कुछ अधिक और बैलों से भैंसा कुछ न्यून लाभ पहुंचाता है, तथापि जितना गाय के दूध और बैलों के उपयोग से मनुष्यों को सुखों का लाभ होता है उतना भैंसियों के दूध और भैंसों से नहीं। क्योंकि जितने आरोग्यकारक और बुद्धिवर्द्धक आदि गुण गाय के दूध और बैलों में होते हैं, उतने भैंस के दूध और भैंसे आदि में नहीं हो सकते। इसलिए आर्यों ने गाय पालना सर्वोत्तम माना है।

गोवंश रक्षा के उपाय

1. गोवंश हत्या से हिन्दुओं के धार्मिक स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार का हनन हो रहा है। इसलिए आज ही इसी क्षण माननीय प्रधानमंत्री पूरे भारत में सम्पूर्ण गोवंश की हत्या पूर्णरूप से बन्द करने का अध्यादेश जारी करें। किसी भी सरकार को किसी की भी धार्मिक स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार को छीनने का अधिकार नहीं है।
2. भारत सरकार अविलम्ब पूरे देश में सम्पूर्ण गोवंश की हत्याबंदी केन्द्रीय कानून बनाये।
3. पूरे देश में सभी कत्लखानों को अविलम्ब बन्द किया जाये, तथा सभी कसाइयों के लाइसेंस रद्द किये जाये और उन्हें गौ-दुग्ध उत्पादन तथा अन्य व्यवसाय के लिए प्रोत्साहित किया जाये, ताकि उनके संस्कार एवं जीवनस्तर में भी सुधार आ सके। हिन्दू-मुस्लिम में आपसी प्रेम एवं आपसी भाईचारा

की भावना उत्पन्न हो सके। जिससे कि राष्ट्रीय एकता एवं राष्ट्रीय अखण्डता का मार्ग प्रशस्त हो।

4. प्रतिदिन लगभग 25-30 हजार गोवंश कत्ल के लिए भारत से बंगला देश जा रहा ह। इसे अविलम्ब रोका जाये।

5. भारत से गोचर्म व गोमांस तथा सभी प्रकार के मांस का निर्यात बन्द किया जाये।

6. विदेशी सांडों के वीर्य से और कृत्रिम गर्भाधान विधि से देशी नस्ल के गोवंश का सर्वनाश करना अविलम्ब बन्द किया जाये। भारतीय नस्ल के अच्छे सांड तैयार किए जायें।

7. भारतीय गोवंश अनुसंधान केन्द्र की स्थापना की जाये तथा उसे पर्याप्त कोष प्रदान किये जायें।

8. रासायनिक उर्वरकों तथा पौधों एवं फसलों की कीटनाशक जहरीली दवाओं के उत्पादन, प्रयोग एवं विक्रय पर प्रतिबन्ध लगाया जाय तथा जैविक कृषि को प्रोत्साहित किया जाये।

9. ट्रैक्टर से खेतों की जुताई बन्द करायी जाये। बैलों से ही खेतों की जुताई करायी जाये। इसके लिए कानूनी प्रावधान की व्यवस्था की जाये। ऐसा होने पर किसान गाय-बैल अधिक संख्या में पालेंगे और किसान मजदूरों को अधिक रोजगार मिलेगा। गोवंश की संख्या अधिक होने से गोबर-गोमूत्र का खाद अधिक प्राप्त होगा। रासायनिक खाद की आवश्यकता समाप्त हो जाएगी।

10. इन्जेक्शन देकर दूध दुहना प्रतिबन्धित किया जाय और ऐसे इन्जेक्षन के निर्माण में भी प्रतिबन्ध लगाया जाय।

11. देश के सभी बैंकों से गोपालकों, कृषकों और बेरोजगार युवक-युवतियों को केवल देशी नस्ल के सांड, बैल और गाय पालने के लिए न्यूनतम ब्याज दरों पर ऋण दिलाया जाये। सरकार की ओर से उन्हें अधिकाधिक अनुदान भी दिया जाये ताकि गोपालन, गो-दुग्ध उत्पादन एवं कृषि को प्रोत्साहन मिल सके।

12. देश के प्रत्येक ग्राम पंचायत में अधिकाधिक गोचरभूमि की व्यवस्था की जाये और हरा चारा उपजाया जाये। बेदखल गोचर भूमियों को पुनः वापस दिलाया जाये। गोचरभूमि की विक्रय पर प्रतिबन्ध लगाया जाये।

13. लोकसभा भवन के समक्ष गोभक्त शहीद चौक में गोभक्त शहीद स्मारक की स्थापना की जाये।

14. जूता-चप्पल की बड़ी-बड़ी सभी कम्पनियों को अविलम्ब बन्द किया जाये। ताकि देश के चर्मकारों को रोजगार मिल सके।

15. गोवंश रक्षण एवं संवर्धन के विषय को केन्द्रीय सरकार की विषय सूची में रखा जाये। चूंकि यह सम्पूर्ण राष्ट्र के उत्थान पतन का विषय है।

16. गोवंश को आदर्श राष्ट्रीय पशु घोषित किया जाये।

17. गोशालाओं, गोरक्षणियों और गोसदनों को अधिकाधिक भूमि एवं अनुदान सरलतापूर्वक प्रदान किया जाये।

सम्पर्क सूत्र :

4/45, शिवाजी नगर, गुड़गांव, हरयाणा

चलभाष — 09911197073

समाचार प्रभाग

ब्रह्मचारी हरिशरण जी विषयक एक ऐतिहासिक पत्र

श्रीमान् आचार्य भगवान्देव जी! सिमडेगा ११-७-१९६६ ई०

नमस्ते!

बड़े दु:ख के साथ यह पत्र लिख रहा हूं। पत्र लिखते-लिखते भी स्वर्गीय पं० हरिशरण जी का दिव्य चेहरा सामने से नहीं हटता। मेरा दिल बहुत दु:खी है, पर पत्र आपके पास लिख रहा हूं। शास्त्री जी दिनांक ७.७.१९६६ को बाजार में सांप का खेल दिखाकर सांप की दवाई का प्रचार कर रहे थे। किसी ने उनको कहा कि आपने इस सांप के दांत तोड़ दिये हैं। इस पर उन्होंने सांप का मुंह फाड़ कर दांत दिखाए। उसी पर गुस्सा होकर सांप ने शास्त्री जी को दो जगह छाती और पुट्ठा पर काटा। उन्होंने अपनी दवाई का प्रयोग किया और बाद में घर चले आये। उन्होंने मुझे पांच बजे बुलाया। सांप ने उनको चार बजे काटा था। मैंने जाकर उनकी हालत देखी। मुझे वह बेचैन और सुस्त नजर आए। मैंने पूछा शास्त्री जी दवाई खाई कि नहीं? उन्होंने कहा-मैं दवाई तो बहुत खा चुका हूं। पता नहीं दवाई से ही ऐसी गड़बड़ है। बोले दवाई कड़वी लग रही है। मैंने उनके कहने पर दवाई घोलकर उनके शरीर पर सब जगह मली। कुछ देर कुछ बोले-मुझे सर्दी लग रही है। मैंने रजाई ढांपकर उनको चौकी पर लिटा दिया। उनके पेट में ऐंठन बढ़ती जा रही थी और गला रुक रहा था। मुंह भी अकड़ता था। मैंने कहा घी पी लीजिये। उन्होंने कहा लाओ। मैंने उन्हें तीन बार में डेढ़ पाव करीब घी पिलाया। उनके पेट की ऐंठन में आराम आया लेकिन मुंह अकड़ता ही रहा। इसी प्रकार करते-करते आठ बज गये, तब गांव के दूसरे लोग आ गये। उन्होंने डाक्टर को बुलाने की सलाह दी और डॉक्टर साहब आये। उन्होंने एक सूई ऐन्टीनहैनम नाम की दी। सूई देने के बाद वे बहुत अधिक सुस्त हो गये। उनको हस्पताल लेजाया गया। वहां पर भी दो तीन सूई दी, लेकिन उनकी हालत में कोई सुधार नहीं आया। अन्त में रात के एक बजे उन्होंने अपने प्राण त्याग दिए। लेकिन मुझे विश्वास नहीं हो रहा था। मैं उनके पास तीन बजे के बाद आया। सुबह पानपोष से स्वामी शिवानन्द जी आए। उन्होंने सलाह दी कि उनको पानी के ड्राम में तीन घंटा तक रखा जाये। हमने सब उपाय किये, परन्तु उनको कोई असर नहीं हुआ। अन्त में उनके शव को साढे चार बजे आठ जुलाई को दफना दिया गया। देशपाल जी रांची गये हुए थे। देशपाल जी को बुलाने का साधन नहीं था। क्योंकि यहां यह रोज टेलीफोन तार सब खराब थे। उनको चिट्ठी द्वार बुलाया गया, वह नौ जुलाई की सुबह आये।

शास्त्री (हरिशरण) जी अपने पीछे बहुत-सा सामान व चल सम्पत्ति छोड़ गये हैं। उनकी सम्पत्ति से और कुछ चन्दा करके उनकी यादगार में अनाथालय या छात्रावास आदि बनाने का विचार है। आपका सिमड़ेगा आना एकबार बहुत जरूरी है। आपके आने से यहां के लोगों पर बहुत प्रभाव पड़ेगा। मेरा आपसे हाथ जोड़कर निवेदन है कि आप अवश्य आ जावें, भूल न करें और देशपाल जी अभी सिमड़ेगा में ही हैं। आज दिन पानपोष जायेंगे और सब ठीक है। कल दिन यज्ञ करके गृह शुद्धि कर दी थी और प्रसाद

वितरण कर दिया था और गरीबों को भोजन करा दिया था।

मैं यहां एक नवयुवक दुकानदार हूं। मैं मदीना दांगी हाईस्कूल में पढ़ा था। १९६० में मैंने दसवीं की परीक्षा पास की थी और शास्त्री कपिलदेव जी जोकि अभी भैंसवाल में हैं, वह मेरे गुरु हैं। शास्त्री हरिशरण जी से मेरा बहुत अधिक प्रेम था और मैं उन्हें गुरु मान चुका था। मेरा शास्त्री जी से सन् १९६० से साथ रहा है और अन्तिम दम तक मैं उनके साथ रहा। सब गुरुकुल झज्जर वालों को मेरी ओर से नमस्ते। आपके आने से यहां के ईसाई पादरियों पर भी बहुत प्रभाव पड़ेगा और देशपाल जी को प्रचार में सुविधा होगी।

आपका शिष्य

प्रेमचन्द

मु०पो० सिमडेगा, जिला रांची, बिहार

जालन्धर (अड्डा होश्यारपुर) में आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब की बैठक थी, उसी समय तार द्वारा हरिशरण के देहान्त की सूचना आचार्य जी को मिली। इस सूचना से आचार्य जी को अत्यधिक मानसिक पीड़ा पहुंची। उन्होंने वहीं से योगानन्द शास्त्री को पत्र लिखवाया कि मैं मानसिक रूप से परेशान हूं अतः कुछ समय बाद गुरुकुल झज्जर लौटूंगा। इसके पश्चात् आचार्य जी दीनानगर दयानन्द मठ, पठानकोट, दसुहा, ढोलवाहा, नवांशहर, आर्यसमाज हस्पताल रोड जम्मू, रिहाडी कालोनी जम्मू, छम्ब, जोडियों, अखनूर, शंकराचार्य मन्दिर श्रीनगर, आर्यसमाज हजूरीबाग, डल झील, उड़ी आदि होते हुए १६ अगस्त १९६६ को वापिस गुरुकुल झज्जर लौट आए। इस यात्रा में मैं उनके साथ था।

— विरजानन्द

ऋषि दयानन्द जी ने कहा है

४. विवाह में बहुत धन का नाश करना अनुचित ही है, क्योंकि वह धन व्यर्थ ही जाता है। इससे बहुत राज्य नष्ट होगये और वैश्य लोगों का भी विवाह में धन के व्यय से दिवाला निकल जाता है। सब लोगों को धन का मिथ्या व्यय करना अनुचित है, इससे धन का नाश विवाह में कभी न करना चाहिए। — चतुर्थ समुल्लास

५. जितने मंडली बांध के फिरते हैं वैरागी और साधु इत्यादिक उनको साधु न जानना चाहिए, किन्तु बड़ा ठग जानना चाहिए और कितने गृहस्थ लोग सदावर्त और क्षेत्र करते हैं, वे अनुचित करते हैं, क्योंकि बड़े धूर्त, गांजा और भांग पीने वाले तथा चोर, डाकू भी वैसे ही लुच्चे सदावर्तों से अन्न लेते और क्षेत्रों में भोजन कर लेते हैं फिर कुकर्म ही करते रहते और हरामी होजाते हैं। बहुत से लोग अपना काम-काज छोड़ सदावर्तों और क्षेत्रों के ऊपर घर के सबकाम और नौकरी-चाकरी छोड़ के साधु वा भिखारी बन जाते हैं, फिर सेंत का अन्न खाते और सोते पड़े रहते हैं अथवा कुकर्म करते रहते हैं। इससे संसार की बड़ी हानि होती है। सो जो कोई सदावर्त क्षेत्र करता है उसमें सज्जन वा सत्पुरुष कोई नहीं जाता। इससे गृहस्थ लोग अन्नादिक दान करना चाहें तो पाठशाला रच लेवें, उसी में सब दान करें अथवा जो श्रेष्ठ धर्मात्मा गृहस्था वा विरक्त होवें उनको अन्नादिक देवे और यज्ञ करें। **क्रमशः**

हमारी विशिष्ट औषधियाँ

संजीवनी तैल

यह तैल घाव के भरने में जादू का काम करता है। भयंकर फोड़े-फुन्सी, गले-सड़े पुराने जख्मों तथा आग से जले हुए घावों की अचूक दवा है। कोई दर्द या जलन किये बिना थोड़े समय में सभी प्रकार के घावों को भरकर ठीक कर देता है। खून का बहना तो लगाते ही बन्द हो जाता है। चोट की भयंकर पीड़ा को तुरन्त शान्त कर देता है। दिनों का काम घण्टों में और घण्टों का काम मिनटों में पूरा कर देता है।

मूल्य : ५० रुपये

च्यवनप्राश

शास्त्रोक्त विधि से तैयार किया हुआ स्वादिष्ट सुमधुर और दिव्य रसायन (टॉनिक) है। इसका सेवन प्रत्येक ऋतु में स्त्री, पुरुष, बालक व बूढ़े सबके लिए अत्यन्त लाभदायक है। पुरानी खांसी, जुकाम, नजला, गले का बैठना, दमा, तपेदिक तथा सभी हृदयरोगों की उत्तम औषध है। स्वप्नदोष, प्रमेह, धातुक्षीणता तथा सब प्रकार की निर्बलता और बुढ़ापे को इसका निरन्तर सेवन समूल नष्ट करता है। निर्बल को बलवान् और बूढ़े को जवान बनाने की अद्वितीय औषध है। च्यवन ऋषि इसी रसायन के सेवन से जवान होगये थे।

मूल्य : १ किलो २०० रुपये

नेत्रज्योति सुर्मा

सुर्मे तो बाजार में पर्याप्त मात्रा में मिल जाते हैं परन्तु इतना लाभप्रद और सस्ता सुर्मा मिलना कठिन है। इसके लगाने से आंखों के सब रोग जैसे आंखों से पानी बहना, खुजली, लाली, जाला, फोला, नजर की कमजोरी आदि विकार दूर होते हैं तथा बुढ़ापे तक आंखों की रक्षा करता है। दुखती आंखों में भी इसका प्रयोग अत्यन्त लाभप्रद है।

मूल्य : ३० रुपये

बलदामृत

हृदय और उदर के रोगों में रामबाण है, इसके निरन्तर प्रयोग से फेफड़ों की निर्बलता दूर होकर पुनः बल आजाता है। पीनस (सदा रहनेवाला जुकाम और नजले) की औषधि है। वीर्यवर्धक, कासनाशक, राजयक्ष्मा, श्वास (दमा) के लिए लाभकारी है। रोग के कारण आई निर्बलता को दूर करता है तथा अत्यन्त रक्तवर्धक है।

मूल्य : १३० रुपये

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला, गुरुकुल झज्जर

हमारे प्रमुख प्रकाशन

१.	व्याकरणमहाभाष्यम् (५ जिल्द) (प्रदीप उद्योत, विमर्शसहित)	१०५०-००
२.	अष्टाध्यायी (पाणिनि)	१५-००
३.	हरयाणा के प्राचीन मुद्रांक	६००-००
४.	लिङ्गानुशासनवृत्ति (सुदर्शनदेव)	१५-००
५.	फिट्सूत्रप्रदीप (सुदर्शनदेव)	१०-००
६.	छन्दःशास्त्रम् (व्रतिमंगलावृत्ति)	४५-००
७.	काव्यालकारसूत्राणि (व्रतिमंगलावृत्ति)	२५-००
८.	निरुक्त (हिन्दीभाष्य) (चन्द्रमणि)	२५०-००
९.	योगार्यभाष्य (आर्यमुनि)	२०-००
१०.	सांख्यार्यभाष्य (आर्यमुनि)	४०-००
११.	मीमांसार्यभाष्य (३ भाग)	२६०-००
१२.	वैशेषिकार्यभाष्य (आर्यमुनि)	६०-००
१३.	न्यायार्यभाष्य (आर्यमुनि)	१००-००
१४.	वेदान्तार्यभाष्य (आर्यमुनि)	१२०-००
१५.	महारानी सीता (स्वामी ओमानन्द)	१००-००
१६.	अष्टाध्यायीप्रवचनम् (६ भाग)	६५०-००
१७.	छान्दोग्योपनिषद्भाष्यम् (शिवशंकर)	२५०-००
१८.	वृहदारण्यकोपनिषद्भाष्यम् (शिवशंकर)	१५०-००
१९.	उपनिषत्समुच्चय (पं० भीमसेन)	१००-००
२०.	ओरिजनल फिलासफी ऑफ योगा	२५०-००
२१.	मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प	३०-००
२२.	दयानन्दप्रकाश (स्वा० सत्यानन्द)	५०-००
२३.	हरयाणा के प्राचीन मुद्रांक (२)	२५०-००
२४.	हरयाणा के प्राचीन लक्षणस्थान	३००-००
२५.	देशभक्तों के बलिदान	१२५-००
२६.	नौरंगाबाद की मृन्मूर्तियां	२५०-००
२७.	स्वतन्त्रता संग्राम में आर्यसमाज का योगदान	४०-००
२८.	यजुर्वेद संहिता (मन्त्रानुक्रमणि)	१००-००
२९.	सामवेद संहिता (मन्त्रानुक्रमणि)	८०-००
३०.	अथर्ववेद संहिता (मन्त्रानुक्रमणि)	३५०-००
३१.	ऋग्वेद संहिता (मन्त्रानुक्रमणि)	३५०-००
३२.	अगरोहा की मृन्मूर्तियां	८००-००
३३.	ओमानन्द अभिनन्दन ग्रन्थ	१००-००
३४.	सुखी जीवन (सत्यव्रत)	३०-००
३५.	महापुरुषों के संग में (सत्यव्रत)	१५-००
३६.	घर का वैद्य (१-५ भाग)	१००-००
३७.	दैनंदिनी (सत्यव्रत)	२५-००
३८.	ब्रह्मचर्य के साधन (१-११ भाग)	६०-००
३९.	प्राचीन भारत में रामायण के मन्दिर	२५०-००
४०.	संस्कारविधि (स्वामी दयानन्द)	५०-००
४१.	स्वामी ओमानन्द ग्रन्थमाला (४ जिल्दो में)	१२००-००
४२.	दयानन्द लहरी (मेधाव्रत आचार्य)	१५-००
४३.	प्राचीन शिलालेख एवं ताम्रलेख	२००-००
४४.	रामायणार्यभाष्य (दो भाग)	३२०-००
४५.	महाभारतार्यभाष्य (दो भाग)	४५०-००
४६.	स्वामी ओमानन्द जीवन (वेदव्रत शास्त्री)	४००.००

आर.एन.आई. द्वारा रजि. नं. 11757

पंजीकरण संख्या-P/RTK/85-3/2014-16

सुधारक लौटाने का पता :-

गुरुकुल झज्जर, जिला झज्जर (हरयाणा)-124103

ग्राहक संख्या

श्री ______________________

स्थान ______________________

डा० ______________________

जिला ______________________

प्रकाशक आचार्य विजयपाल गुरुकुल झज्जर ने आचार्य प्रिंटिंग प्रेस, दयानन्दमठ, गोहाना मार्ग, रोहतक में मुद्रक-वेदव्रत शास्त्री के प्रबन्ध से छपवाया।